उपोद्घात।

प्रत्येक जाति की उन्नति, चाहे सम्पत्ति से हो चाहे सभ्यता से, प्रकृति की वस्तुओं के गुण और कारणों के जानने, और उनसे जहाँ तक हो सके, लाभ उठाने पर निर्भर है; या यों कहो कि सायन्स (Science विज्ञान) के जानने और उसका प्रयोग करने पर अवलम्बित है। कोई जाति दूसरी जातियों के साथ दर्जे में बराबर नहीं रह सकती, जब तक उसको उन जातियों के बराबर सायन्स का ज्ञान न हो, केवल ज्ञान ही नहीं वरन उनके सदृश सायन्स का उपयोग न कर सकती हो। मनुष्य का कोई काम ऐसा नहीं, जो बिना सायन्स की सहायता के चल सकता हो। इङ्गलेण्ड का नामाङ्कित विज्ञानी हरबर्ट स्पेन्सर (Philosopher Herbert Spencer) अपने अद्वितीय पुस्तक एजुकेशन (Education) में, देखो इसी बात को कैसे सुन्दर प्रकार से वर्णन करता है!

वह लिखता है:—

"स्वास्थ्य और जीव की रक्षा के निमित्त कौन सी विद्या सबसे अधिक आवश्यक है? सायन्स।

उपजीविका के उपार्जन के लिए कौन सी विद्या सब से विशेष गौरवशाली है? सायन्स।

वह कौन सी विद्या है, जिससे सन्तान के पालन पोषण के लिए उत्तम शिक्षा मिलती है? सायन्स।

वह कौन सी विद्या है, जो सामाजिक कर्त्तव्यों के पालन करने के योग्य बनाती है? सायन्स।

वह कौन सी विद्या है, जिसके द्वारा कलाएँ उच्च स्थिति पर पहुंच सकतीहैं, और जिससे अनभिज्ञ होने से मनुष्य उन कलाओं का आनन्दोपभोग नहीं कर सकता? सायन्स।"

चाहे जिस तरह से देखा जाय, सायन्स ही ऐसी विद्या है, जिस के द्वारा मनुष्य सब प्रकार चैन से जीवन-निर्वाह कर सकता है। इसी सायन्स ने जङ्गलियों को शक्तिशाली जातियाँ बना दिया और उन जातियों के अगणित लोगों के आनन्दविलास और पूर्ण सुख के लिए वह सामान उपार्जन कर दिया, जो उनके पुरखाओं ने स्वप्न में भी न देखा होगा।

यह बात हमारे देश के लिए आनन्दसूचक है, कि कुछ देश के शुभेच्छुकों के अन्तःकरणों में यह ख़याल आया है, कि देश की पूरी उन्नति नहीं हो सकती, जब तक लोग विशेष करके सायन्स को सीखने और उसका उपयोग न करने लगें। इसके साथ ही यह बात भी सब को अङ्गीकार ही है, कि विद्या और कलाओं को मनुष्य जितनी सुगमता से मातृ-भाषा में सीख सकता है उतनी सुगमता से पर-भाषा में नहीं सीख

सकता। इन्हीं बातों पर ध्यान देकर विद्या-विशारद सायन्स पर हिन्दी-भाषा में पुस्तकें निर्माण करने लगे हैं। मैं भी यह छोटा सा पुस्तक वायु के वर्णन में लिखकर विद्यानुरागियों के अर्पण करता हूँ। यद्यपि इस पुस्तक का वास्तविक विषय वायु है, परन्तु जगह जगह और विद्याओं का भी वर्णन आ गया है। मेरा अभिप्राय इस पुस्तक के लिखने से केवल यही है, कि लोगों को इसके पढ़ने से सायन्स के साथ अनुराग उत्पन्न हो। यदि इस पुस्तक को पढ़कर लोगों को सायन्स का ज्ञान और अभिरुचि बढ़ी, तो मैं समझूँगा कि मेरा परिश्रम सफल हुआ।

इस पुस्तक के लिखने में मुझे जिन ग्रन्थों से सहायता मिली है उनके नाम नीचे लिखे जाते हैं। इन ग्रन्थकर्त्ताओं का मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

1. The Ærial World by Dr. G. Hartwig.
2. The Story of the Atmosphere by Mr. Douglas Archibald.
3. Fragment of Science by Prof. Tyndall.
4. Light by Prof. Tyndall.
5. Physiography by Prof. Huxley.
6. The Fairy land of Science by Arabella B. Buckley (Mrs. Fisher)

7. Natural Philosophy by Mr. Atkinson, translated from Ganot's Cours Elementaire De Physique.

सीतामऊ,
१ जनवरी सन् १९०७

राष्ट्रकूट रामसिंह।

वायुविज्ञान।

पहिला अध्याय।

—:o:—

वायु का घनफल (Volume)।

इस पृथ्वी का ¾ भाग समुद्रों से ढका हुआ है, और ¼ भाग जो शेष है उस में भी असंख्य नदियाँ, नाले, सरोवर आदि स्थित हैं। इस बात से प्रकट होता है कि पानी का प्रस्तार विशेष ही है; परन्तु नहीं, वायु के सामने पानी का प्रस्तार कुछ विशेष गणनीय नहीं है, क्योंकि वायु सर्व भूगोल को चाहे समुद्र हो वा भूमि घेरे हुए है। शोध करने से ज्ञात हुआ है कि समुद्र की मध्यममान गहराई बारह सहस्र फ़ीट से विशेष है, परन्तु वायु की गहराई अभी तक निश्चयपूर्वक ज्ञात ही नहीं हुई है। अनुमान यह है, कि कई सो मील होगी। यद्यपि पानी की अपेक्षा वायु का अस्तित्व पृथ्वी और आकाश के बहुत ही बड़े

भाग में पूरित है, तथापि गुरुता और गाढ़ेपन में पानी वायु से बहुत बढ़ा हुआ है। वायु का भार इञ्च भर जगह में पृथ्वी तल से लेकर उस सीमा तक, जिसके ऊपर वायु का अभाव है, केवल १५ पाउण्ड, अर्थात् ७॥ सेर, है; परन्तु इतने ही वज़न के पानी का समावेश करने को १ इञ्च वर्तुल और ३० फ़ीट लम्बी नली चाहिए। इस रीति से यदि यह समस्त वायु जिस से भूगोल आच्छादित है वाष्प स्थिति को छोड़ कर इतना गाढ़ा हो जाय कि पानी के समान द्रव स्थिति को धारण कर ले और समुद्र में मिल जाय, तो उससे समुद्र में कोई विशेष आधिक्य होना वा समुद्र की सर्वदा की स्थिति का विशेष स्थित्यन्तर होना सम्भव नहीं है; केवल इतना ही होगा कि समुद्र अपने वर्तमान पृष्ठ भाग से ३० फ़ीट ऊंचा हो जायगा, अर्थात् समुद्र की इस ३० फ़ीट उँचाई से पृथ्वी का वह विभाग पानी के अन्दर डूब जायगा, जो कि पृथ्वी के पृष्ठ भाग से ३० फ़ीट से अधिक ऊंचा नहीं है।

२—वायु की उँचाई कितनी है अर्थात् यों कहिए कि वह स्थल पृथ्वी से कितना दूर है, जहां वायु की समाप्ति होती है? इस प्रश्न का उत्तर अत्यन्त सुगम होता यदि पृथ्वी के पृष्ठ भाग से वायु के अन्त तक उसकी सान्द्रता एक समान होती। पानी वायु से ७७१ गुणा भारी है, अर्थात् जिस वस्तु में १ तोला वायु का समावेश होता है उस में ७७१ तोले पानी समायगा, इस लिए साधारण त्रैराशिक के नियम से वायु का

घन फल सुगमता से ज्ञात हो जाता परन्तु वायु स्थितिस्था पक होने के कारण थोड़े ही दबाव से दब जाता है, और बहुत सा वायु सिमिट कर थोड़ी सी जगह में आ जाता है, और जब वह दबाव दूर हो जाता है तब तत्काल फैलकर बहुत सी जगह रोक लेता है। पृथ्वी का आकर्षण शक्ति के कारण से वायु के ऊपर के पुट का दबाव नीचे के पुट पर पड़ता है, इस लिए, प्रत्येक नीचे के पुट का गाढ़ापन ऊपर के पुट से विशेष होता जाता है। इसी कारण से वायु का पुट पृथ्वी से जितना दूर होता जाता है उतना ही विरल और हलका होता जाता है। परन्तु गाढ़ापन और भार कम होने का कुछ नियम नहीं है, क्योंकि ज्यों ज्यों वायु फैलता है, त्यों त्यों उसके फैलने की शक्ति कम होती जाती है। इसके व्यतिरिक्त पृथ्वी की सर्दी और गर्मी की न्यूनाधिकता और इस कारण से पानी का बूंदा की कमाग्शी (जो सर्वदा वायु में अदृश्य अवस्था में स्थित रहती हैं) होती है। इत्यादि पूर्वोक्त बातों से वायु के घनफल का पूरा अनुमान नहीं हो सकता है।

२—जिन लोगों ने गुब्बारे के द्वारा वायु के मध्य विहरण किया है, उनके लेख से यह बात प्रकट हुई है, कि साढ़े पांच माल के ऊपर वायु इतना विरल और हलका है, कि वह किसी प्रकार प्राणी का सरक्षण करने के लिए काफी नहीं हो सकता है। उनके महान् प्रयत्नों से इस बात के अनुमान करने में कुछ भी सहायता नहीं मिली कि वायु का घनफल कितना होगा।

४—इस हृदय-मोहक मसले की ढूंढ यहाँ ही परिपूर्ण नहीं हुई है, ज्योतिपियों ने भी इस बात का संशोधन किया है, और उनको अपने प्रयत्नों में और लोगों की अपेक्षा विशेष सार्थकता और सफलता प्राप्त हुई है। पाठकों के दृष्टिगोचर हुआ होगा, कि उडुगण से प्रफुल्लित अमल रजनी में तारे के समान चमकते हुए पिण्ड आकाशमण्डल से अत्यन्त शीघ्रता के साथ एक दिशा से दूसरी की ओर प्रयाण करते हुए दिखाई देते हैं, जिसको सब लोग "तारा टूटना" कहते हैं। ज्योतिपियों ने देख भाल कर यह निश्चय किया है, कि यह वस्तु और कुछ नहीं है किन्तु उल्कागण (Meteor) है, जो सूर्यमण्डल से सम्बन्ध रखता है, और वह भी हमारी पृथ्वी के समान सूर्य की प्रदक्षिणा किया करता है। जब इन में से कोई उल्का पृथ्वी के निकट आजाती है, तब वायु के घर्षण से प्रज्वलित होकर दीप्तिमान् तारे के समान दिखाई देती है, और क्षण भर में भाफ होकर अदृश्य हो जाती है। कभी कोई पूरी की पूरी भी धरणी पर गिर जाती है। इनकी संख्या अगणित है जिसका अनुमान भी नहीं हो सकता है। चालीस करोड़ के क़रीब उल्का तो प्रति वर्ष हमारी भूमि के वायु से रगड़ खाकर प्रज्वलित होती हैं। ९ आगस्ट और १३ और १४ नवम्बर को अधिकतर उल्कापात होता है। इन्हीं के देखने से ज्योतिपियों ने त्रिकोणमिति (*Trigonometry*) से यह जान लिया है, कि ये उल्काएं (Meteors) पृथ्वी से सौ मील के क़रीब की

उँचाई पर प्रज्वलित होती हैं। इस से यह परिणाम निकाला गया है कि वायु इतनी ही उँचाई तक है। शायद इसके ऊपर वायु नहीं हो, परन्तु अनुमान यह कहता है, कि इतनी उँचाई तक वायु इतना गाढ़ा है कि जिसके घर्षण से उल्काएँ प्रज्वलित हो जाती हैं। यह भी संभवनीय है, कि इस के ऊपर वायु अत्यन्त विरल हो, और उसके घर्षण से उल्काएं प्रज्वलित नहीं हो सकती हों; कारण ऐसी कोई पूरी प्रतिपादन करने वाली बात नहीं है, कि जो यह सिद्ध कर दे कि इस अवधि के ऊपर वायु का अस्तित्व नहीं है। यदि यह कल्पना सत्य होगी कि उल्का वायु के घर्षण से प्रज्वलित होती हैं (और इसमें कोई शंका करने का कारण भी नहीं है), तो इस बात का निःसन्देह प्रमाण मिलेगा, कि वायु कम से कम सो मील की उँचाई तक अवश्य है। उस सीमा के ऊपर क्या दशा है यह अभी तक ज्ञात नहीं हुआ है।

—:o:—

दूसरा अध्याय ।

—०:०:०—

वायु का बोझ ।

५—वायु का बोझ कितना है ? यह प्रश्न पूर्वोक्त प्रश्न से और भी अधिक आनन्ददायक है । ऊपर वर्णन कर आये हैं, कि वायु का बोझ इन्च भर स्थान में पृथ्वी के पृष्ठ भाग से ले कर वायु के अन्त तक ७॥ सेर है, परन्तु वायु का बोझ नीचे से ऊपर तक एक समान नहीं है । जो वायु का पुट भूगोल से मिला हुआ है उसमें एक सौ घन इंच का बोझ १६ रत्ती अर्थात् दो माशे होता है, और साढ़े चार मील उँचाई पर उतने ही वायु का भार केवल ६ रत्ती होगा ।

६—यदि इंच भर स्थान में वायु का बोझ ७॥ सेर है, तो मनुष्य के शरीर पर इस विचार से कितना बोझ पड़ता होगा ? वास्तव में मध्यममान उचाई जो मनुष्य के शरीर की है उस पर चार पाँच सौ मन से न्यून बोझ नहीं पड़ता होगा । इस बात पर यह शंका अवश्य उत्पन्न होगी कि इतने बोझ को मनुष्य कैसे सहन करता है, और इसके दबाव से पिस क्यों नहीं जाता है ? द्रव और तरल पदार्थों का यह स्वभाव है, कि उनका दबाव चारों ओर से एक समान होता है । इसलिए इस स्वभाव के कारण से नीचे के परिमाणु
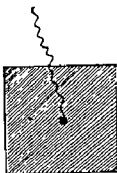
ऊपर के दबाव का प्रतिकार करते हैं, और हमारे शरीर में जो वायु और आर्द्रता स्थित है, वह बाहर के वायु का दबाव रोके रहती है. इस कारण से मनुष्य का शरीर पिस जाने से बचा रहता है।

७—इस स्थान पर वायु के बोझ अर्थात् दबाव के कुछ उदाहरण देते हैं।

(क) एक इञ्च भर लम्बा चौड़ा काग़ज़ का मज़बूत टुकड़ा लो, और उसके बीच में एक धागा डालो, इसके पश्चात् उस काग़ज़ के। पानी से अच्छी तरह भिगो कर मेज़ पर रख दे।, और हाथ से बराबर कर दे। यदि धागा खींच कर काग़ज़ के। मेज़ से जुदा करना चाहोगे, ते। वह सुगमता से जुदा नहीं होगा, किन्तु थोड़ा बल करना पड़ेगा। पानी में लस नहीं, कि काग़ज़ चिपक गया, फिर सुगमता से क्यों नहीं जुदा होता? कारण यह है, कि ऊपर के वायु का दबाव काग़ज़ के। दबा रहा है, और नीचे से वायु सहारा नहीं दे सकता, क्योंकि पानी के कारण से काग़ज़ के नीचे वायु नहीं जा सकता। जब जल सूख जायगा काग़ज़ झटपट पृथक् हो जायगा।

(ख) पतले चमड़े का टुकड़ा दो तीन इञ्च लम्बा चौड़ा लेकर गोल कतर लो। उस के बीच में छेद कर के

मज़बूत धागा डालो, और छेद को मोम इत्यादि से अच्छे प्रकार से बन्द कर दो, कि वायु का प्रवेश नहीं हो सके; तदनन्तर चमड़े को पानी में तीन चार घण्टे भिगाओ कि भली भाँति से नरम हो जाय। इसके पश्चात् उसे चिकने और चौरस पत्थर पर रख कर सब ओर से बराबर कर दो कि कहीं सिमटा हुआ न रहे। अब यदि धागा ऊपर की ओर खींचोगे तो पत्थर ऊपर की ओर उठ आयेगा, परन्तु चमड़ा उस पत्थर से जुदा नहीं होगा। कारण यह है, कि नमी से चमड़े के नीचे वायु का प्रवेश नहीं है, और ऊपर वायु का दबाव उस को पत्थर से अलग नहीं होने देता है, पत्थर के नीचे वायु जा सकता है। यदि पत्थर का बोझ उस वायु के बोझ से कम है, जो चमड़े को पत्थर पर दबा रहा है, तो पत्थर उठ जायगा और चमड़ा पत्थर से विलग नहीं होगा; परन्तु जब चमड़ा सूख जायगा पत्थर गिर पड़ेगा।

(ग) एक गिलास को पानी से भरो। ऊपर से काग़ज़ रख कर उस पर हाथ अच्छी तरह जमालो। उसी विधान से हाथ से दबाये हुए गिलास को शीघ्रता से उलटा दो। तत्पश्चात् चुपके से हाथ को काग़ज़ के नीचे से हटालो, तो न काग़ज़ जुदा होगा न जल
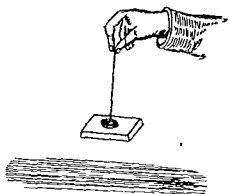
गिरेगा, क्योंकि वायु का दवाव काग़ज़ को नीचे की ओर से रोक रहा है, और काग़ज़ पानी को। वायु का दवाव चारों ओर एक समान है।

८—अब यदि कोई ऐसा प्रश्न करे कि यह बात कैसे ज्ञात हुई कि वायु का बोझ इञ्च भर जगह में ७॥ सेर है? हवा के अन्त तक कभी कोई गया नहीं, और वायु को भी इकट्ठा करके तुला में तोल सकते नहीं, फिर हवा का बोझ अवगत हुआ तो क्यों कर? सच है, नीचे से ऊपर तक के वायु को इकट्ठा करके तुला में लाकर तोलना संभवनीय नहीं है, परन्तु वायु का तोल जानने की अन्य रीतियाँ हैं, और उनसे तुला की अपेक्षा विशेषतर सत्यता के साथ वायु का भार ज्ञात हो सकता है।

एक झुकी हुई काच की नलिका U इस आकार की लो, और उसको पानी से भरो, तो दोनों नलियों में पानी बराबर उँचाई में रहेगा। दूसरी नली इसी आकार की लो, इसमें एक ओर पानी भरो और दूसरी ओर कोई तेल, जो पानी से हलका हो। तेल पानी से हलका होता है इस लिए वह पानी से कुछ उँचा रहेगा। इसी आकृति की तीसरी नली में एक ओर थोड़ा सा पारा डालो और दूसरी ओर पानी। पारे का बोझ पानी से विशेष है इसलिए पानी ऊँचा रहेगा। इन तीनों नलिकाओं पर विचार करने से स्पष्ट प्रकट होगा, कि हलकी और भारी चीज़ों के डील डौल तथा

वोझ में नियमित सम्बन्ध है, कि जिसमें कभी भेद नहीं पड़ता। उस झुकी हुई नली को देखो जिसमें एक तरफ़ पारा और दूसरी ओर पानी है; यदि पारा १ इञ्च होगा, तो उसके जोड़ की नली में पानी साढ़े तेरह इञ्च होगा। तुला में तोलने से भी ठीक यही वात प्रकट होगी। जिस बर्तन में एक तोला पानी समाता है, उसमें साढ़े तेरह तोला पारा समायेगा। इसलिए इस नियम के अनुसार अगर एक नलिका में केवल वायु का दबाव हो, और जोड की नली में कोई द्रव पदार्थ इस रीति से हों कि उस पर वायु का दबाव कुछ भी नहीं है, तो पूर्वोक्त वस्तु का जो भाग वायु के दबाव का समतोलन करता हो, उसका जो कुछ वोझ होगा वही वोझ वायु के उस दल का होगा, जो नली की जड़ से लेकर वायु के अन्त तक है।

९—इस बात की परीक्षा के लिए एक झुकी हुई नली को पानी से ऊपर तक भर दो, और अँगूठे से उसके मुख को बंद करके नली को उलट दो तो एक ओर की नली पूर्ण रिक्त हो जायगी, और एक में पानी भरा रहेगा; तत्पश्चात् उसी प्रकार अँगूठे से बंद की हुई नलिका को सीधी करलो; पानी एक ही नली में भरा रहेगा दूसरी में कुछ भी नहीं जायगा। क्योंकि वायु का दबाव उसको रोके हुए है। यदि नली ३० फ़ीट ऊंची और पूरी की पूरी पानी से भरी हुई होगी, तो वायु उस पानी को रोके रहेगा। परन्तु यदि नली

क
ख
ग

वोझ में नियमित सम्बन्ध है, कि जिसमें कभी भेद नहीं पड़ता। उस झुको हुई नली के देखो जिसमें एक तरफ़ पारा ग्रोर दूसरी ओर पानी है; यदि पारा १ इञ्च होगा, तो उसके जोड़ की नली में पानी साढ़े तेरह इञ्च होगा। तुला में तोलने से भी ठीक यही वात प्रकट होगी। जिस बर्तन में एक तोला पानी समाता है, उसमें साढ़े तेरह तोला पारा समायेगा। इसलिए इस नियम के अनुसार अगर एक नलिका में केवल वायु का दवाव हो, ग्रोर जोड की नली में कोई द्रव पदार्थ इस रीति से हों कि उस पर वायु का दवाव कुछ भी नहीं है, तो पूर्वोक्त वस्तु का जो भाग वायु के दवाव का समतोलन करता हो, उसका जो कुछ वोझ होगा वही वोझ वायु के उस दल का होगा, जो नली की जड़ से लेकर वायु के अन्त तक है।

९—इस वात की परीक्षा के लिए एक झुकी हुई नली के पानी से ऊपर तक भर दे, ग्रोर ग्रँगूठे से उसके मुख के बंद करके नली के उलट दो तो एक ओर की नली पूर्ण रिक्त हो जायगी, ग्रोर एक में पानी भरा रहेगा; तत्पश्चात् उसी प्रकार ग्रँगूठे से बंद की हुई नलिका के सीधी करलो; पानी एक ही नली में भरा रहेगा दूसरी में कुछ भी नहीं जायगा। क्योंकि वायु का दवाव उसके रोके हुए है। यदि नली ३० फ़ीट ऊंची ग्रोर पूरी की पूरी पानी से भरी हुई होगी, तो वायु उस पानी के रोके रहेगा। परन्तु यदि नली

क
ख
ग

की लम्बाई तीस फ़ीट से अधिक होगी, तो ३० फ़ीट तक ही पानी पूर्वोक्त नली में रहेगा; जितना उससे अधिक होगा उतना उतर कर दूसरी नली में आजायगा। इस प्रयोग से सिद्ध होता है, कि किसी स्थान पर पानी के तीस फ़ीट के दल का जो बोझ होगा वही बोझ उस स्थान पर वायु के दल का होगा। एक इञ्च मुख की नली में तीस फ़ीट पानी का बोझ १५ पाउण्ड होता है, इसलिए वायु के दल का भार जो इतने ही स्थान पर है वह भी १५ पाउण्ड है। परन्तु वायु का बोझ सर्व काल एक समान तुला हुआ नहीं रहता है, कभी कभी उसमें थोड़ा सा भेद हुआ करता है, परन्तु यह भेद बहुत ही स्वल्प होता है, अर्थात् तीसवें अंश से विशेष नहीं होता; तथापि इस किंचित् भेद से भी ऋतु की दशा पर बड़ा प्रभाव पड़ता है।

वायु-भार-मापक यंत्र। (Barometer)

१०—मनुष्य के जीवन की अगणित आवश्यक वस्तुएँ ऋतु की दशा पर अवलम्बित हैं। इन्हीं जीवन की आवश्यक वस्तुओंने मनुष्य को इस बात के शोध करने को उद्युक्त किया, कि कोई ऐसा उपाय निकाले, जिससे ऋतु का पलटा होने के पूर्व वह ज्ञात हो जाया करे। जब कोई आवश्यकता होती है, उस समय कोई न कोई उसका उपाय भी निकल जाता है, इस नियमानुसार एक ऐसा यंत्र बन गया, कि जिससे

वायु के दबाव का थोड़ा भेद भी स्पष्टता से प्रकट होता है। इसको बेरामेटर (Barometer) अर्थात् वायुभारमापक यंत्र कहते हैं। इस यंत्र की बनावट उस नियम के अनुसार है, जिस का वर्णन हम अभी कर आये हैं; जो हमारे इस प्रयोग से व्यक्त हो जायगा। हम एक काच की नली तीस इंच से कुछ अधिक लंबी एक ओर से बंद दूसरी ओर से खुली लेते हैं, उसमें ऊपर तक पारा भर कर अँगूठे से मुख को बंद करके एक छोटे से बर्तन में, जो पारे से भरा हुआ है, उलट देते हैं, और अँगूठे को सावधानी पूर्वक इस प्रकार से हटाते हैं, कि वायु नली के बीच में जाने न पावे। इस समय कुछ पारा नली में से पूर्वोक्त बर्तन में आ जाता है, और नली का कुछ भाग ऊपर की ओर रीता हो जाता है; लग भग तीस इञ्च के पारा नली में चढ़ा रहता है, नीचे नहीं आता, क्योंकि वायु के दल (Column) का दबाव, जो बर्तन के पारे पर पड़ता है, नली के पारे को उतरने से रोकता है। जो भाग नली के ऊपर की ओर रीता रहता है उसको पूर्ण शून्य कहते हैं, क्योंकि उसमें किंचित् मात्र भी वायु नहीं है। इससे प्रकट है, कि नली का पारा उसी कारण से रुका हुआ है जिससे झुकी हुई नली में पानी रुका हुआ था (पारा ८)। नली के भीतर थोड़ा सा भाग शून्य है, इस लिए उस पर किसी प्रकार का दबाव नहीं है और बाहर से बर्तन के पारे के पृष्ठ भाग के द्वारा वायु के दल का दबाव उस पर पड़ता है। वायु के इस दल

क
ख
ग
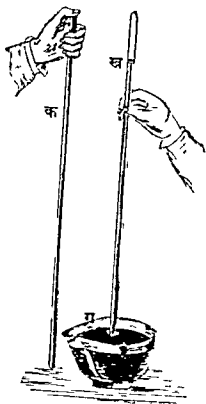
की भूमिका उतनी ही है जितना नली का मुख है। पारा तीस इञ्च से ऊपर नली में क्यों नहीं रहता? याद रहे, कि नली में पारे के रुके रहने का कारण केवल यही है, कि वायु का दबाव जो बर्तन के पारे पर पड़ता है उसको उतरने नहीं देता है; अगर यह दबाव नहीं होता, तो पारा नली में ठहरता ही क्यों? इधर से वायु दबाव डाल कर पारे को ऊपर चढ़ाता है, उधर नली का पारा उसका सामना करता है, इसलिए यह बर्तन और नली तुला के समान है। वायु का दल मानो वह वस्तु है, जिसको हम तोलना चाहते हैं, और नली का पारा मानो बाट है। जब बाट और वस्तु दोनों तोल में बराबर होते हैं, तब किसी ओर का पल्ला नहीं झुकता, तुला की डंडी सीधी रहती है; यही बात ठीक ठीक यहां भी उपस्थित है। जितना पारा नली में चढ़ा हुआ है, वह वायु के उस दल का बोझ बतला रहा है, जिस का दबाव बाहर के बर्तन पर पड़ता है। यदि नली का मुख इञ्च भर का है, तो तीस इञ्च पारे का बोझ ठीक १५ पाउण्ड होगा; इस लिए इञ्च भर जगह में वायु का जो दल है उस का बोझ भी ठीक १५ पाउण्ड हुआ। इस कारण से विदित हो गया, कि प्रति घन इञ्च में वायु का बोझ १५ पाउण्ड होता है। यदि नली का मुख आध इञ्च होगा तो उस में तीस इञ्च पारा केवल ७½ पाउण्ड होगा, और वायु के ऐसे दल का बोझ

बतलाएगा जो आधे इञ्च जगह में होगा। इसलिए वायु के जिस दल का यह प्रतिकार करता है उस का भार भी ७½ पाउण्ड होगा। आशय यह है, कि नली का मुख कितना भी हो, पारे की उँचाई तीस ही इञ्च रहेगी। इस में भेद उस समय होगा जब वायु में कोई ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई हो, जिस से उसके बोझ में कुछ फ़र्क़ पैदा हो।

११—सर्वदा वायु में पानी बाष्प स्थिति में अदृश्य रहता है। यह बाष्प निर्मल वायु से भार में न्यून है। जब तक बाष्प सामान्य परिमाण से वायु में उपस्थित रहता है, बेरामेटर का पारा तीस इञ्च तक रहता है। परन्तु पूर्वोक्त बाष्प की न्यूनता के समय में वायु के बोझ में बढ़ती और उसकी बढ़ती के समय में वायु के भार में घटती होती है। इसलिए जब बेरामेटर का पारा उतर कर २९ इञ्च रह जाता है, तब समझते हैं, कि वायु का बोझ घट गया,-और उस से अनुमान करते हैं, कि वायु में नमी बढ़ गई है. और वर्षा की आशा की जाती है। कभी कभी दूसरे कारणो से भी बेरामेटर का पारा उतर आता है, उस स्थिति में पारा उतरने पर भी पानी नहीं बरसता। जब वायु का बोझ विशेष हो जाता है, तब बेरामेटर का पारा भी तीस इञ्च से ऊंचा हो जाता है, जिससे यह सिद्धान्त निकलता है कि वायु में नमी न्यून है, वर्षा की आशा नहीं। इस बात से पाठक समझ गये होंगे कि किस सुगमता और अच्छे प्रकार से समस्त विश्व के वायु का

बोझ ज्ञात हो सकता है, और वायु के बोझ का विभेद अवगत होने से ऋतु के विषय में भविष्य कथन हो सकता है।

१२—बेरामेटर यंत्र की रचना पाठकों को हम ऊपर कह हो आये हैं। दूसरे पत्र में सर्व साधारण सीधे बेरामेटर का चित्र बनाया जाता है। नली लम्बाई में तीस इञ्च से कुछ विशेष है; यंत्र को रक्षा के हेतु एक लकड़ी के घर में रख दिया है, ताकि रज इत्यादि का पारे में प्रवेश न हो। घर के पेंदे में वायु के गमन के लिए (र) एक छोटा सा रन्ध्र है। तुम ऊपर पढ़ आये हो, कि वायु का दवाव सब ओर से एक समान होता है, इसलिए नीचे की ओर रन्ध्र होने में कोई हानि उपस्थित नहीं होती।

जल का नल।

१३—नल से जल का ऊपर ले जाना बहुत काल से लोग जानते थे, परन्तु हम नहीं जानते, कि लोग इस बात से भी अभिज्ञ थे कि क्यों जल ऊपर चढ़ता है। पानी चढ़ने का कारण यही वायु का दवाव है, जिसका ऊपर वर्णन हो चुका है। संभव हे, कि नल के बनाने वाले इस नियम को जानते हो, परन्तु जब हम उन बनाने वालों के नाम नहीं जानते हैं, तब हम उनकी विद्या और कौशल्य से अनभिज्ञ हों, इस में क्या आश्चर्य हे? बहुत सी विद्याएँ काल के परिवर्तन और पृथक् पृथक् जातियों की उन्नति और अवनति के

कारण नाश हो गई हैं, परन्तु उनके फल जो उच्च और नीच श्रेणी के मनुष्यों के नित्य नैमित्तिक कार्यों में स्पष्ट रूप से देखे जाते हैं, इस से यह अनुमान होता है कि उन फलो की जनक विद्याएँ किसी समय विद्यमान थीं। नल से प्रथम हम पिचकारी के विषय में कुछ लिखना चाहते हैं, जिस से नल को बनावट के समझने में बहुत सहायता मिलेगी। पिचकारी की नली में बीच की डाट कुछ कसी हुई होती है, ऐसी कि वायु ऊपर से बीच में नहीं जा सके, परन्तु न इतनी कसी हुई कि ऊपर ऐंचने में और नीचे की ओर दबाने में कठिनता हो। प्रथम डाट को दबा कर नली के मुख के निकट ले आते हैं; तत्पश्चात् मुख को पानी में रखते हैं; फिर डाट को ऊपर खींचते हैं, चूँकि वायु ऊपर से नली के बीच आ नहीं सकता, इसलिए नली वायु से पूर्ण रीती हो जाती है, और बाहर वायु का दबाव उस पानी के पृष्ठ भाग पर पड़ता है, जिस में नली का मुख है, और उस दबाव के कारण से पानी ऊपर चढ़ जाता है। यदि मानलें कि पिचकारी की नली तीस फीट तक लम्बी है तो डाट के खींचने से पानी बराबर चढ़ता चला जायगा और यदि नली की लम्बाई तीस फ़ीट से विशेष होगी तो पानी तीस फ़ीट से आगे नहीं चढ़ेगा। इतना तो समझना ही चाहिए, कि पिचकारी को सीधी रख कर डाट खींची गई है।

क
ख

१४—अब हम नल की बनावट के विषय में वर्णन करते हैं जिसका चित्र दूसरे पत्र पर बना हुआ है। नल के सम्बन्धी एक मनोरंजक इतिहास है, जो हम नल का वृत्तान्त लिखने के पश्चात् बयान करेंगे। क, ख, एक नल है; ग, उसके पेंदे में एक छेद है; छेद में एक ढकना लगा है, जो भीतर की ओर खुलता है; घ, उस नल के बीच में डाट है, जो वैसी ही है जैसी पिचकारी के भीतर होती है, भेद केवल इतना ही है, कि इस डाट में एक छेद भी है (डाट की आकृति और बनावट दिखलाने के लिए डाट का चित्र पृथक् भी बना दिया है)। इस डाट के छेद में एक ढकना लगा है, जो ऊपर की ओर खुलता है, नल के पेंदे के छेद से एक नली छ, चढ़ी हुई है, जिस का दूसरा मुख कुए या कुण्ड में डाल देते हैं, जहां से पानी निकालना चाहते हैं। जब पूर्वोक्त डाट को नीचे की ओर दबाते हैं, तो नल के पेंदे का छेद बंद हो जाता है, और डाट का छेद खुल जाता है; जब डाट को ऊपर की ओर खींचते हैं, तब डाट का छेद बंद हो जाता है। इसलिए डाट के नीचे का वायु नहीं रहता, और जब डाट के ऊपर की ओर खींचते के समय नल पूर्ण रीता हो जाता है, तो नली में का वायु बल करके उस रीते स्थान में आना चाहता है, इसलिए नल के पेंदे का ढकन खुल जाता है, और नल का वह भाग जो डाट के ऊपर खींचने के कारण से रीता हो गया था, नली के वायु से भर जाता है; फिर जब डाट को नीचे की ओर दबाते हैं,

तब पेंदे का छेद बंद हो जाता है, जिससे वायु नली में पीछा नहीं जा सकता; इसलिए नीचे दबाने में डाट का छेद खुल जाता है, डाट के नीचे जाने तक उस के छेद से सब वायु बाहर निकल जाता है। दो चार बार हिलाने से नली और नल दोनों वायु से सम्पूर्ण रीते हो जाते हैं। उस समय बाहर के वायु के दबाव से, जो कुण्ड अथवा कुए के पानी के पृष्ठभाग पर पड़ता है, पानी नल में चढ़ने लगता है; नल में ऊपर की ओर च. एक टोंटी लगी हुई है, इस में भी एक ढकना लगा होता है, जो बाहर की ओर खुलता है। नल में ऊपर तक पानी आने के पश्चात् जब डाट को नीचे दबाते हैं तो पानी के बल से टोंटी का ढकना खुल जाता है, और पानी बाहर आने लगता है। याद रहे कि पानी कुए अथवा कुण्ड से केवल ३२ फ़ीट की उँचाई तक चढ़ सकेगा, और जब तक दूसरा नल न लगाया जाय उसके ऊपर नहीं जायगा।

१५—यह एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक कथा है, कि सत्रहवें शतक ईसवी में फ्लॉरेन्स नगर के एक बाग़ में किसी कुए से जल पहुँचाने की आवश्यकता पड़ी। और बाग़ की भूमि पानी के पृष्ठ भाग से बहुत ऊंची थी। नल बनाया गया, और जब उसके द्वारा पानी ऊपर लेजाने लगे, तो अत्यन्त आश्चर्य हुआ, कि जल किसी उपाय से ३२ फ़ीट से ऊंचा नहीं जाता था। लाखों उपाय नल के बनाने वालों ने किये परन्तु कोई सफलता प्राप्त नहीं हुई। जल ३२ फ़ीट तक नहीं चढ़ा, निराश

जल का नल ।
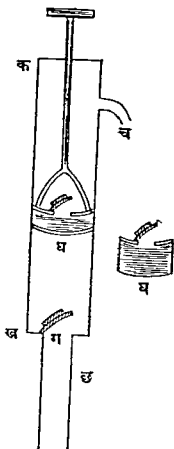
होकर वे गॅलिलिओ (Galileo) के निकट गये, सब वृत्तान्त कह सुनाया, और पानी ऊपर नहीं चढ़ने का कारण पूछा। गॅलिलिओ ने पूर्ण शून्य असंभव है इस नियम का उपहास तो किया, परन्तु न पानी के चढ़ने का कारण बतलाया, और न कोई उपाय बतलाया, जिस से पानी को ऊपर लेजा सकते। लोग कहते हैं कि गॅलिलिओ पूर्वोक्त नियम के विरुद्ध था, परन्तु लोग इस को बहुत विश्वास के साथ मानते थे।

१६—गॅलिलिओ (Galileo) के शिष्य टारिस्ली (Torricelli) ने इस बात पर विचार करना आरंभ किया, कि पानी के ऊपर चढ़ने का वास्तविक कारण क्या है? यह बात ज्ञात होने के पश्चात् नहीं चढ़ने का कारण जानना अत्यन्त सुगम होगा। इस विषय में बड़ी खोज के पश्चात् अंत में उस ने यह बात सिद्ध करली, कि वायु में भी बोझ है। और इसी वायु का दबाव पानी के चढ़ने का कारण है; और ३२ फ़ीट पानी के दल (Column) का बोझ पृथ्वी के पृष्ठ भाग से लेकर वायु के अंत तक के वायु के पूरे कालम का समतोलन करता है। जिस अनुभव तथा रीति से टारिस्ली (Torricelli) ने इस बात का संशोधन किया, उस से पूरा निश्चय केवल इसी बात का ही नहीं हुआ, कि वायु बोझल वस्तु है, और पानी के चढ़ने का कारण वायु का दबाव है, परन्तु एक नूतन नियम भी निर्णीत हुआ, जिसके आधार पर यंत्र बेरामेटर

बना, जिस के लाभ के विषय में विशेष वर्णन की आवश्य-कता नहीं है। बेरामेटर की बनावट के बारे में पूरा वर्णन हम ऊपर लिख आये हैं, इसलिए अब पुनरुक्ति करने का कोई प्रयोजन नहीं दिखाई देता।

वायु को गाढ़ा करने का यंत्र।

१७—हम ने ऊपर वर्णन किया है, कि वायु अत्यन्त स्थितिस्थापक है, थोड़े से दबाव से सिमट कर थोड़ी सी जगह में आ जाता है, और यदि दबाव न रहे तो फैल कर बहुत सी जगह रोक लेता है। वायु को गाढ़ा करने के लिए एक यंत्र निर्माण किया गया है, जिसके द्वारा बहुत से वायु को दबा कर एक बर्तन में इकट्ठा कर सकते हैं. इस प्रकार इकट्ठे किये हुए वायु की उष्णता के अंश को न्यून करने से उस को पानी के समान द्रव भी बना सकते हैं। दूसरे पत्र पर वायु को गाढ़ा करने के यंत्र का चित्र दिया है। क, ख, एक नल है; ग, एक बर्तन है, जिस में वायु इकट्ठा करने की इच्छा है; घ, नल के पेंदे में एक छेद है, उस में एक ढकना लगा हुआ है जो बाहर की ओर खुलता है। बर्तन ग, को नल के पेंदे से जोड़ देते हैं। च, डाट है जैसी पिचकारी में होती है, छ, एक नली है. उस में एक ढकना लगा हुआ है, जो नली के मुख की ओर खुलता है। जब डाट च, को ऊपर खींचते हैं, तो डाट के नीचे का स्थल रीता होने लगता है, इसलिए बर्तन का वायु

वायु को गाढ़ा करने का यंत्र ।
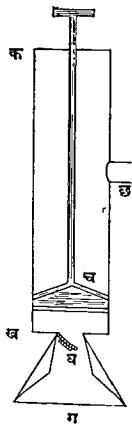
रीते स्थल को भरने के लिए ऊपर जाना चाहता है, और इसके बल से ढकना ऊपर उठता है, और छेद बंद हो जाता है। जब डाट नली छ, से ऊपर निकल जाती है तो बाहर के वायु के बल से नली का ढकना उठ जाता है, और नल वायु से परिपूर्ण हो जाता है। फिर जब डाट को नीचे की ओर दबाते हैं, तो नली का छेद बंद हो जाता है, वायु बाहर नहीं जा सकता, और नल के पेंदे का छेद खुल जाता है, और नल का वायु दब कर पूर्वोक्त बर्तन में इकट्ठा हो जाता है।

(Air pump) एयर पंप (अर्थात् बर्तन से वायु निकालने का यंत्र)

१८—इस की बनावट भी उन्हीं नलों के समान है, जिनका हम ऊपर वर्णन कर आये हैं। इन दिनों में एयरपंप के आकार इत्यादि में बहुत सी सुधारणा हुई है, परन्तु ढंग वही है, जो हम वर्णन कर आये हैं। क, ख, एक नल है, ग, डाट है जैसी पिचकारी के अंदर रहती है, भेद इतना ही है कि डाट में एक छेद है, जिस में ढकना लगा है, जो ऊपर को ओर खुलता है। नल के पेंदे में घ, एक रन्ध्र है, उस में भी एक ढकना लगा हुआ है, और यह भी ऊपर को ओर खुलता है। नल के नीचे एक नली है, जिस को उस बर्तन के मुख में जमा देते हैं जिस में से वायु निकालना चाहते हैं,

इस प्रकार से कि बाहर का वायु बर्तन के भीतर किसी भांति जाने न पाये। जब डाट को ऊपर खींचते हैं तो डाट का छेद बंद हो जाता है, और डाट के नीचे नल खाली होने लगता है, और उस रीते स्थल को भरने के लिए बर्तन का वायु ऊपर आना चाहता है, उस के बल से पेंदे का छेद खुल जाता है। फिर जब डाट को नीचे दबाते हैं तो पेंदे का छेद बंद हो जाता है, इस कारण से वायु बर्तन में वापस नहीं जा सकता, और उस समय जब कि डाट का छेद खुल जाता है, तब डाट के नीचे आने तक जितना वायु नल के भीतर होता है सब बाहर निकल जाता है। इसी प्रकार कई बार डाट को ऊपर चढ़ाने और नीचे दबाने से सब बर्तन का वायु निकल जाता है।

—— :०: ——

एअर पंप (अर्थात बर्तन से वायु निकालने का यंत्र)।
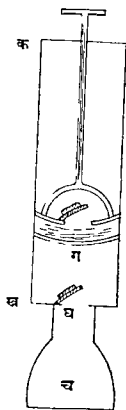
तीसरा अध्याय ।

वायु का बोध ।

१९—वायु की पहचान क्या है? वायु कोई मूर्त पदार्थ है अथवा अमात्रक? असंकरित तत्त्व है या मिश्रित? मूर्त उस चीज को कहते हैं, जिस में बोझ और घनफल अर्थात् लम्बाई चौडाई और गहराई हो, और स्थल रोकती हो, यानी जिस बर्तन में पूर्वोक्त चीज स्थित हो, जब तक वह उस से बाहर न निकाल ली जाय दूसरी चीज उस बर्तन में न जा सके, और यदि उसके निकाले विना दूसरी चीज बर्तन में डालना चाहें, तो वह उसकी रोक करे, और किसी कारण से गति उत्पन्न होवे तो उस स्थिति में जिस दूसरी चीज से संयोग हो उसको भी विचलित करे। हम देखते हे, कि ये बातें वायु में उपस्थित हैं, इसलिए वायु भी एक मूर्त पदार्थ है । बोझ और घनफल के विषय में ऊपर वर्णन हो चुका है। और वायु का चलना और उस कारण से दूसरी चीज़ का हिलना सब लोगों को अच्छी तरह अवगत है, अतएव अब केवल स्थल रोकने की ही बात वर्णन करते हैं।

२०—एक रीता गिलास हाथ में लो । तुम कहोगे कि यह सर्वथा रीता है, क्योंकि गिलास में कोई वस्तु दृष्टिगोचर

नहीं होती है, परन्तु वास्तव में गिलास रीता नहीं है, क्योंकि वायु उसमें उपस्थित है। तुम कहोगे कि उसमें कोई वस्तु दिखाई नहीं देती, फिर इस बात का क्या प्रमाण है कि वायु गिलास में है? सत्य है कि वायु दृष्टि में नहीं आ सकता, क्योंकि उसमें रंग नहीं, इसलिए नेत्र इन्द्रिय से उसका ज्ञान होना अशक्य है। एक पात्र पानी से भरा हुआ लाओ, और इस गिलास को उलट कर पानी के पृष्ठ भाग पर उसका मुख जमा कर सीधा का सीधा पानी *के भीतर प्रवेश करने के लिए दबाओ तो तुमको अत्यन्त* रोक मालूम होगी। यह रोक किस वस्तु की है? और क्यों है? यह रोक उसी वायु की है, जो गिलास में उपस्थित है। उसको किसी ओर से बाहर निकलने का मार्ग नहीं मिलता और तुम्हारे दबाने से पानी गिलास में आना चाहता है, जिसको वायु रोकता है। यदि गिलास के किनारे को किसी ओर से पानी से थोड़ा ऊँचा करके गिलास पानी में दबाओ, तो पानी में बुलबुले पैदा होंगे, जिससे मालूम होगा कि वायु गिलास से निकल गया। और गिलास पश्चात् सुगमता से पानी में उतर जायगा। इससे यह सिद्ध हुआ, कि मूर्त पदार्थ के सब धर्म वायु में उपस्थित हैं, इसलिए वायु भी एक मूर्त पदार्थ है। इस स्थल पर इस बात को सूचित कर देना अनुचित नहीं होगा, कि बहुत लोगों की यह कल्पना है कि आकाश का नीलापन वायु का रंग है,

परन्तु वास्तव में देखा जाय तो यह कल्पना सत्य नहीं मालूम होती है। क्योंकि यदि मान भी लिया, कि वायु का रंग नीला है, तो प्रातः काल व सायङ्काल के समय जो आकाश का रंग लाल और नारंगी दृष्टि-गोचर होता है उसका कारण क्या बतलाया जायगा ? यह तो सब जानते हैं, कि प्रातःकाल और सायङ्काल को प्रभाकर की किरणें वायु के बड़े विस्तीर्ण दल में से होकर पृथ्वी पर पहुँचती है, तो क्या नीली पारदर्शक वस्तु के बड़े विस्तार में से जब किरणें जाती हैं तो वह नीली वस्तु लाल मालूम होने लगती है ?

२२—यह तो सिद्ध हो चुका कि वायु मूर्त पदार्थ है। सब मूर्त पदार्थ इस संसार में तीन स्थिति में पाये जाते हैं। १—ठोंस जैसे सोना, चाँदी, लोहा इत्यादि। २—द्रव जैसे पानी। ३—गॅसैस जैसे वायु। हम कहते हैं कि समस्त मूर्त पदार्थ तीन रूप में पाये जाते हैं, यह नहीं कहते कि तीन प्रकार के हैं, क्योंकि तीनों पूर्वोक्त स्थितिएं केवल गरमी की बढ़ती घटती से एक ही पदार्थ में पैदा हो सकती हैं। जैसे कि पानी की गरमी जब ३२ दरजे से न्यून होती है, तब वह जमकर बर्फ़ बन जाता है; और जिस वक्त ३२ दरजे से विशेष होती है, उस समय जल अपने सर्वदा के रूप में रहता है; और जब गरमी २१० दरजे बढ जाती है, तब बाष्प बन जाता है, अर्थात् गॅसिअस स्थिति को प्राप्त होता है। यही

स्थिति बहुत करके सब पदार्थों को है केवल गरमी के दरजे स्थिति परिवर्तन करने के लिए प्रत्येक वस्तु के पृथक् पृथक् हैं। जल में एक आश्चर्य्य-जनक बात यह भी है, कि गरमी कितनी ही कम क्यों न हो वह सर्वदा उड़ उड़ कर वायु में मिलता रहता है। एक बर्तन जल से भर कर रख दो, थोड़े ही दिवसों में पानी उड़ जायगा, और बर्तन रीता हो जायगा, पानी कहाँ गया? तुम कहोगे सूख गया; सूख जाने से तुम्हारा आशय क्या है? क्या नष्ट हो गया? परन्तु जगत् की कोई वस्तु नष्ट नहीं हो सकती; जिस स्थिति को तुम नष्ट होना कहते हो, वह वास्तव में या तो आकृति का बदलना है या स्थान का, अर्थात् जिस वस्तु के लिए तुम नष्ट होना कथन करते हो या तो वह एक स्थल से दूसरे स्थल को चले जाने के कारण से तुम्हारी दृष्टि में नहीं आती है, या उसकी स्थिति ऐसी बदल गई है, कि उसको नेत्र देख नहीं सकते। गरम चाय में शक्कर डालो तो क्षण भर में वह शक्कर अदृश्य हो जायगी, परन्तु नष्ट नहीं हो जायगी क्योंकि यद्यपि नेत्र उसको देख नहीं सकते, तथापि जिह्वा उसका पता लगा सकती है। तुम चाय को चखकर मिठास के कारण कह सकते हो कि शक्कर नष्ट नहीं हुई। यही स्थिति जगत् की सब वस्तुओं की समझ लेनी चाहिए, क्योंकि कोई वस्तु नष्ट नहीं होती। संक्षेपतः सर्वदा पानी उड़ उड़ कर वायु में मिलता है। यदि बोतल पर डाट न लगी हो, तो जल धीरे धीरे उड़ता है, परन्तु

जो डाट ढीली लगी हो तो त्वरा के साथ उडता है ; क्योंकि डाट ढीली होने के कारण से वायु का आवागमन निरन्तर रहता है।

—:o:—

चौथा अध्याय।

—०:०:०—

वायु असंकरित तत्त्व है अथवा मिश्रित ?

२३—बहुत काल से यूनान के तत्त्वज्ञानियों ने यह सिद्धान्त निश्चय किया है कि इस जगत् में चार तत्व हैं पृथ्वी, वायु, जल और अग्नि; और जो वस्तुएं और जीवधारी संसार में हैं, वे सब इन्हीं तत्त्वों के परिमाणुओं के मिलने से बने हैं। भूमि के प्रत्येक स्थल पर ये चारों पदार्थ एक समान पाये जाते हैं, इसलिए यह बात इतनी विस्मयकारक नहीं, कि यूनानी विज्ञानियों ने इन्हें तत्त्व मान लिए, परन्तु आश्चर्य्य है तो इस बात पर कि पिछले विज्ञानी संशोधकों ने सहस्रावधि वर्षों पर्य्यन्त इस सिद्धान्त की परीक्षा करने की ओर ध्यान क्यों नहीं दिया, और धर्मों के सिद्धान्तों के समान बिना प्रमाण और परीक्षा के इसे क्यों मानते गये। अब भी ऐसे लोग बहुत से हैं, कि जो इस सिद्धान्त की सत्यता और असत्यता पर विवाद करना तो अलग रहा, किन्तु इसके विरुद्ध बात श्रवण करना तक पाप समझते हैं, परन्तु प्रकृति-विद्या की वृद्धि, और प्रयोग तथा निरीक्षा के उत्कर्ष ने किसी विद्या-विषय के सिद्धान्त का अपनी प्राचीन स्थिति पर नहीं रहने दिया ; विशेष करके रासायनिक विच्छेदन ने इन चार तत्त्वों की तो पूरी पूरी असत्यता स्थापन कर दी है।

२४—अठारवें शतक ईस्वी में प्रीसली (Priestley) की जाँच और अन्वेषण से यह सिद्धान्त निश्चित हुआ, कि वायु तत्त्व नहीं है, परन्तु दो ग्यासों से बना हुआ है; जिनके नाम ऑक्सीजन (Oxygen) और नाइट्रोजन (Nitrogen) हें। अत्यन्त आश्चर्य्य-जनक बात यह है, कि पृथक् पृथक् दोनों ग्यास घातक हें, परन्तु वायु, जो केवल इन्हीं दो ग्यासों का मिश्रण है, चराचर जीवों के जीवन का सब से बड़ा कारण है; यहाँ तक कि प्राणियों को कुछ क्षण वायु श्वास लेने को न मिले तो उनका जीवित रहना अशक्य है। कारण यह हे, कि यद्यपि ऑक्सिजन व नायट्रोजन पृथक् पृथक घातक हैं, तथापि दोनों के स्वभाव एक दूसरे के विपरीत हैं, इसलिए जब दोनों नियुक्त प्रमाण से मिलते हैं, तब एक दूसरे के हिंसक धर्मों को नष्ट कर देते हैं, और इनके मिलने से वह प्राणरक्षक पदार्थ बन जाता है, जिसको वायु कहते हें।

२५—ऑक्सिजन स्वभावतः ही मानसिक और शारीरिक शक्ति का उत्तेजक है। इससे इन्द्रियों में तीव्रता, बुद्धि में तीक्ष्णता, प्रकृति में अमित साहस, अवयवों में स्फूर्त्ति और समस्त शरीर में शक्ति पेदा होती हे। परन्तु इन सब गुणों का अतिरेक होने पर भी कुछ लाभ न होते केवल हानि ही होती है। अतः जितना परिमाण ऑक्सिजन का वायु में उपस्थित हे, यदि उससे थोड़ा भी बढ जाय, तो प्राणि मात्र

को जो कुछ अल्प जीवित प्राप्त हुआ है, वह और भी क्षीणतर हो जायगा। इसके विपरीत नायट्रोजन का स्वभाव यह है, कि वह इन्द्रियों को मंद, अंगों को अशक्त और पूरे शरीर को निर्बल कर देता है। सच तो यह है, कि जीवधारियों को धातु आदि के समान जड़ बना देता है। ये स्वभाव जो कि वर्णन किये हैं, दोनों के अलग अलग हैं। यद्यपि न तो इनका स्वभाव जीवों की प्रवृत्ति के प्रतिकूल है और न ये प्राणनाशक विष हैं, तथापि पृथक् पृथक् इन दोनों में जीवित रखने का सामर्थ्य नहीं है। परन्तु जब ये दोनों परस्पर मिलते हैं, तब प्रत्येक एक दूसरे को अपने समान बनाने का प्रयत्न करता है, अर्थात् ऑक्सिजन नायट्रोजन को अपने समान तीक्ष्ण और तेजोमय बनाना चाहता है, और नायट्रोजन उस को अपने समान मंद व निस्तेज रखने की इच्छा करता है। सारांश यह है, कि इन दोनों के संयोग से वह प्राण-रक्षक वायु उत्पन्न होता है, कि जिसकी समानता जीवनावलम्बन में कदाचित् पीयूष भी न कर सकेगा। यहाँ तक कि यदि प्राणियो के शरीरों में विकार और बाहर से प्राणों को नष्ट करने वाले साहित्य उपस्थित न हो, तो सम्भव है कि वे अमर हो जायं।

२६—वायु में सामान्यतः ऑक्सिजन और नायट्रोजन का यह परिमाण है, कि घनफल के अनुसार सौ अंश में ऑक्सिजन २१ अंश और नायट्रोजन ७९ अंश; तौल के अनुसार ऑक्सिजन २३ अंश और नायट्रोजन ७७ अंश। ठोस-

पन में ये दोनों प्रायः बराबर हैं, इस कारण से दोनों पूर्ण रूप से मिल जाते हैं। पृथ्वी के पृष्ठ भाग से लेकर वायु के अन्त तक दोनों गॅस प्रायः उसी परिमाण से वायु में उपस्थित रहते हैं, जैसा कि हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। इस कारण रासायनिक संघट्टन के अनुसार सब जगह का वायु जीवों के रक्षण करने के लिए एक समान उपयोगी है।

२७—निर्मल ऑक्सिजन ऐसा पाया नहीं जाता है, कि जिसमें कोई वस्तु मिली न हो, वायु में नायट्रोजन के साथ मिला हुआ है, और पानी में हायड्रोजन के साथ। स्मरण रहे कि ऑक्सिजन और हाइड्रोजन जब रासायनिक संघट्टन से नियत भाग से घुल मिलकर एक हो जाते हैं तब पानी बन जाता है।

२८—पानी में ऑक्सिजन और हायड्रोजन का परिमाण इस रीति के अनुसार है-घन फल में तो एक भाग ऑक्सि-जन और दो भाग हायड्रोजन, और बोझ में ८ भाग ऑक्सि-जन और एक भाग हायड्रोजन।

२९—ऑक्सिजन कुछ ठोस वस्तुओं में भी मिला हुआ पाया जाता है, परन्तु अधिकांश पानी और वायु ही में है। नीचे हम उन मिश्रित पदार्थों के नाम लिखते हैं जो ऑक्सि-जन से मिलकर बने हैं :—

वायु ... ... ऑक्सिजन और नायट्रोजन
पानी ... ... ऑक्सिजन और हायड्रोजन

आग का भी अस्तित्व अधिक तर ऑक्सिजन के ही कारण है, क्योंकि ऑक्सिजन और कॉरबन के मिलने से कारबॉनिक असिड गॅस बनता है, परन्तु जिस समय ऑक्सि-जन और कॉरबन में रासायनिक संघट्टन आरंभ होता है उस समय उष्णता उत्पन्न होती है। यह उष्णता उस काल तक स्थित रहती है जब तक कॉरबॉनिक असिड गॅस बन नहीं चुकता। जब वायु प्राणी के श्वास लेने से शरीर में प्रवेश करता है, तब वहाँ शरीर के भीतर के कॉरबन और वायु के ऑक्सिजन में रासायनिक संघट्टन उत्पन्न होता है, जिस से शरीर में उष्णता पैदा होती है; फिर जब वायु बाहर आता है, तब उस में ऑक्सिजन लेश मात्र भी नहीं रहता, और ऑक्सिजन के स्थान में कॉरबॉनिक असिड गॅस बाहर आता है। जब ऑक्सिजन और कॉरबन आपस में मिलते हैं तो रासायनिक संघट्टन से उष्णता पैदा होती है। इस के पश्चात् दोनों मिलकर एक हो जाते हैं, इस मिश्रित गॅस* को कार-बॉनिक असिड गॅस कहते हैं।

---

* कॉरबानिक ऑसिड गॅस प्राणियों के लिए प्रचण्ड विष है। जब देखो तब घटनाएँ सुनने में आती हैं, कि अज्ञानी मनुष्यों ने अपनी असावधानी से और कॉरबॉनिक ऑसिड गॅस के गुण से अजान होने के कारण इस गॅस के विष से प्राण खोये। कॉरबॉनिक ऑसिड गॅस के विषैले होने का यह एक सीधा सा प्रमाण है—एक बड़ा सा काच

पाँचवाँ अध्याय।

—:o:—

शीत और उष्णता।

३०—यदि शीत-काल में प्रातःकाल में शयन से उठ कर बाहर आओगे तो जाड़ा मालूम होगा। उष्ण-काल में हमारे

का बर्तन लो, और एक चूहे को उसमें बंद कर दो, इस प्रकार से कि बाहर की वायु उसमें प्रवेश न कर सके, तो थोड़ी देर में चूहा हाँपने लगेगा और क्षण भर में मर जायगा। जब तक बर्तन के वायु में ऑक्सिजन स्थित था, चूहा जीवित रहा, परन्तु उसके श्वास लेने से थोड़ी देर में ऑक्सिजन बदल कर कॉरबोनिक ऑसिड गैस बन गया, और उसके विष से चूहे के प्राण नष्ट हुए।

ऐसे घर में बहुत से मनुष्यों का इकट्ठा होकर बैठना, कि जिस में वायु का आवागमन पूर्ण रीति से न होता हो, प्राणों के लिए हानि-कारक है। शीत काल में कोई कोई मनुष्य आग की अँगीठी कमरे में रख कर और द्वार बंद करके सो रहते हैं, ऐसा करना बहुत हानि-कारक है, विशेष करके उस स्थिति में, जब कि द्वार नवीन रीति के अनुसार बने हुए हों, जिन में से वायु का प्रवेश बहुत थोड़ा होता है। यह तो तुम जानते ही हो कि आग क्या वस्तु है? यही ऑक्सिजन और कारबन के रासायनिक संघटन का फल है। अगर कमरे में वायु

भारत-वर्ष में घर के अन्दर ही मध्यान्ह समय में उष्णता मालूम होती है। इस शीत और उष्णता के मालूम होने का

इतना ही आता है, जिसका ऑक्सिजन केवल अग्नि को ही देदीप्यमान रख सकता है, तो बाहर का आया हुआ ऑक्सिजन और कमरे का ऑक्सिजन कुछ तो मनुष्य के श्वास लेने से और कुछ अँगीठी की आग से बदल कर सब का सब थोड़े ही काल में कॉरबोनिक ऑसिड गॅस हो जायगा और परिणाम यह होगा, कि थोड़ी ही देर में मनुष्य की स्थिति बिगड़ जायगी, और शीघ्र उपाय नहीं किया तो प्राणों का नाश होना निश्चित है। यह थोड़े ही वर्षों की बात है कि एम. ज़ोला (M. Zola) फ्रांस का नामाङ्कित पुरुष कॉरबोनिक ऑसिड गॅस के विष से मर गया। उक्त साहिब अपनी पत्नी के साथ कमरे में जलती हुई आग रख कर द्वार बंद करके सो रहा था। वह तो मर गया; और उसकी पत्नी मूर्छित मिली और बड़े प्रयत्नों से उसके प्राण बचे।

इस वर्णन का आशय यह है, कि प्राणियों के श्वास लेने से जो वायु बाहर आता है उसमें जीवितावलम्बन की शक्ति नहीं रहती, इसलिए यदि प्रकृति की ओर से कोई प्रबन्ध वायु के सुधार और स्वच्छ करने का नहीं होता, तो समस्त वायु कभी का विषमय हो गया होता, और सब जीव जगत से कभी के नष्ट हो गये होते, परन्तु वनस्पति में यह गुण है कि प्रकाश के प्रभाव से उसमें वायु के शोषण की शक्ति उत्पन्न हो जाती है; फिर जब कारबोनिक ऑसिड गॅस से भरा हुआ वायु उन वनस्पति पर से बहन करके जाता है, तब

कारण क्या है ? कोन सा पदार्थ है कि जो हमारे शरीर तक उष्णता और शीतता को पहुँचाता है ? विदित है कि वायु

इसमें से उनके परिपोषक कारबन को वे चूस लेते हैं, क्योंकि उस पर उनका पोषण अवलम्बित है। यह विदित है, कि कारबॉनिक ऑसिड गॅस केवल कारबन और आक्सिजन का मिश्रण है, और जब इस मिश्रण में से कारबन निकल गया, तो आक्सिजन मात्र ही रह गया, और फिर वायु ज्यों का त्यों शुद्ध हो गया। इस रीति से जीवधारी और बनस्पति एक दूसरे के सहायकारी बने रहते हैं, जीवधारी तो बनस्पति के लिए कारबन तैयार करते हैं, और बनस्पति वायु में से कारबन को भक्षण करके उसे जीवधारियों के श्वास लेने के योग्य बना देते हैं।

अब हम पाठकों के मनोरंजन के लिए इस छोटे से वर्णन में एक प्रयोग करके यह दिखाना चाहते हैं, कि वायु की जो स्थिति अग्नि के जलने से होती है ठीक ठीक वही जीवधारियों के श्वास लेने से होती है। यद्यपि यह बात केमिस्ट्री (Chemistry) से सबन्ध रखती है, परन्तु इस स्थान पर इसका वर्णन करना असंगत न होगा।

एक बोतल लो, और एक ओर से झुके हुए तार में जलती हुई मोमबत्ती लगा कर उसको बोतल में लटका दो। थोड़ी देर तक बत्ती जलती रहेगी, पश्चात् लौ घटने लगेगी, और फिर बुझ जायगी। यदि दूसरी बार बत्ती को जला कर बोतल में लटकाओ तो फौरन बुझ जायगी। इस से प्रकट है कि बत्ती के जलने से बोतल के वायु में कोई अनूठा परिवर्तन अवश्य हुआ है। जाँच के वास्ते थोडा सा चूने

के सिवाय और कोई पदार्थ नहीं जो कि सर्वदा हमारे शरीर से मिला रहता है। निःसन्देह यही वायु हमारे शरीर तक शीत और उष्णता पहुँचाने का साधन है। प्रकृति से वायु

का पानी बोतल में डालो, पानी शीघ्र ही दुग्ध सा श्वेत हो जायगा। इसी रीति से थोड़ा सा चूने का पानी गिलास में लेकर पतली नली के मार्ग से उसमें फूँको, तो थोड़ी देर में पानी वैसा ही श्वेत हो जायगा जैसा कि बोतल में डालने से हुआ था। जाचने से विदित होगा, कि दोनों स्थिति में यह धवलता, जो कि जल में उत्पन्न हुई, खड़िया के कारण से है। प्रश्न यह है, कि खड़िया पानी में कहा से आई? और खड़िया है क्या वस्तु? चून और कारबानिक ऑसिड गैस के मेल से खड़िया पैदा होती है। बोतल में बत्ती के जलने से ऑक्सिजन और कारबन मिले, इनके मिलने से कारबॉनिक ॲसिड गैस उत्पन्न हुआ (कारबन बत्ती में उपस्थित था)। नली के मार्ग से गिलास में फूँकने से फेफड़े में का कारबॉनिक ऑसिड गैस गिलास में आया, और चूने के पानी को खड़िया बना दिया।

चूने का पानी बनाने की विधि।

एक तोला वे बुझा चूना सेर भर साफ मीठे पानी में घोल कर चीनी के बर्तन में बंद करके रख दो। तीन घण्टे में चूना नीचे बैठ जायगा, और स्वच्छ सा पानी रह जायगा, उसको धीरे धीरे लेकर बोतल में भरदो, और ऊपर से डाट लगा दो, खुले रहने से हवा का कारबन उसमें मिल जायगा और पानी बिगड़ जायगा।

न शीतल है न उष्ण, परन्तु दूसरे कारण से ये दोनों हालतें वायु में हो जाता हैं, जिस का वर्णन आगे आयेगा।

३१—प्रकृति का नियम यह है, कि यदि भिन्न उष्णता की दो वस्तुएँ मिलें, तो आपस में परिवर्तन हो कर दोनों में उष्णता बराबर प्रमाण की हो जाय। अतएव जब ऐसा वायु हमारे शरीर को स्पर्श करता है, कि जिस की उष्णता हमारे शरीर की उष्णता से न्यून है, तो पूर्वोक्त नियम के अनुसार हमारे शरीर से उष्णता निकल कर वायु में प्रवेश होने लगती है। और हमको सर्दी मालूम होती है। यदि वायु की उष्णता हमारे शरीर की उष्णता से अधिक होती है, तो हमारा शरीर प्रकृति के नियम को स्वीकार कर के वायु से उष्णता शोषण करने लगता है। हमारे स्वास्थ्य के लिए जितने दर्जे की उष्णता आवश्यक है वह नियत है। उस से अधिक हमारे लिए हानि-कारक होगी। इस कारण से हम को उष्णता से पीड़ा होती है, और यह पीड़ा हम को उसकी हानि से बचने के लिए सचेत करती है। यदि किसी देश के विषय में कहा जाता है, कि अमुक देश में सर्दी विशेष पड़ती है और अमुक देश में उष्णता अधिक होती है, तो उस कथन का यह अभिप्राय है कि उस देश का वायु विशेष शीतल अथवा उष्ण होता है।

थर्मामेटर (Thermometer)

३२—वायु की उष्णता का माप एक यंत्र द्वारा होता है, जिसे थर्मामेटर (Thermometer) कहते हैं। इस के द्वारा वायु की उष्णता की थोड़ी सी भी न्यूनाधिकता सुगमता से विदित हो जाती है। जिस नियम के अनुसार यह यंत्र निर्मित हुआ है वह यह है, कि प्रत्येक पदार्थ की स्थूलता चाहे वह पदार्थ ठोस हो, वा द्रव हो, वा गॅसिअस हो, उष्णता पाकर बढ़ती है, और उष्णता की न्यूनता की दशा में सिमटती है। लोहे का एक पतरा लेकर उस में रन्ध्र करो, लोहे की एक ऐसी सलाई लो, जिसकी मोटाई उस रन्ध्र के बराबर हो, अर्थात् सलाई उस छिद्र में न ढीली हो न कसी। इस सलाई को थोड़ी देर अग्नि में रख कर यदि छिद्र मे डालोगे, तो न समायगी, क्योंकि इसकी स्थूलता, उष्णता पाकर बढ़ जायगी। इसी नियम के अनुसार थर्मामेटर तय्यार हुआ है। पारा उष्णता की न्यूनाधिकता होने में अत्यन्त व्यवस्थित अनुक्रम से सुकड़ता और फैलता है। काच की एक ऐसी नली लेते हैं, जिस के एक अन्त में एक खोखल गोली हो, और दूसरा अन्त खुला हो। गोली को दीप की शिखा से आँच देते हैं, जिस से गोली और नली का वायु उष्णता पाकर फैलता है। नली का एक अन्त खुला होने के कारण फैल कर वायु इस रन्ध्र के मार्ग से निकल जाता है। वायु

के शीतल होने के पूर्व ही उक्त नली के खुले हुए अन्त को पारे के भरे हुए बर्तन में रख देते हैं। उष्ण होने से कुछ वायु उसमें से निकल गया है, अतएव गोली में इस समय पूर्व से न्यून वायु शेष रहा है। जब नली का वायु शीतल होता है, तो सिमटता है, और सिमटने से पूर्व की अपेक्षा न्यून स्थल रूंधता है। इसलिए कुछ नली रिक्त रह जाती है। बाहर के वायु का दबाव जब बर्तन के पारे पर पड़ताहै, तो पारा रिक्त स्थल को आक्रमण करने के लिए ऊपर चढ़ता है (जैसे पंप-में पानी वायु के दबाव से ऊपर चढ़ता है), और थोड़ा सा पारा गोली में भी जा पहुँचता है। अब इस गोली और नली को पुनः दीप की शिखा से आँच देते हैं, तो थोड़ी देर में पारा उबलने लगता है, और उसका बाष्प नली के शेष बचे हुए वायु को निकाल देता है। अब नली और गोली में वायु नहीं रहता, केवल पारे का बाष्प रह जाता है। पुनः नली के खुले हुए मुख को पारे के बर्तन में डालते हैं। गोली और नली में इस समय वायु तो होता नहीं, केवल पारे का बाष्प होता है, जब यह बाष्प शीतल होता है तो सिमटता है, और कुछ नली सर्वथा ख़ाली हो जाती है; अतएव बाहर के वायु के दबाव से बर्तन का पारा नली में और चढ़ जाता है, और नली और गोली पारे से भर जाती है। नली के शीतल होने के पूर्व उस के मुख को पिघले हुए काच से बंद कर देते हैं, ताकि वायु नली में न जाने पावे।

३३—जब यन्त्र इस रीति से तय्यार हो चुकता है, और ठंडा भी हो जाता है, तब उसको कुटी हुई बर्फ में प्रवेश करते हैं, जो छोटी सी पेटी में भरी होती है। बर्फ की शीतलता से पारा सिमटने और नली में उतरने लगता है, जब उतरते उतरते एक स्थान पर ठहर जाता है, और सिमटना और उतरना पारे का बंद हो जाता है, तब उस स्थान पर जहाँ तक पारा अब है चिन्ह कर देते हैं। इस चिह्न को सहननांक (Freezing point) कहते हैं। जब कभी यह यन्त्र पिघलती हुई बर्फ में रक्खा जायगा इसी स्थान तक पारा आजाया करेगा, न इस से नीचे उतरेगा न ऊपर रहेगा। जब वायु में सर्दी इस दर्जे की होगी तब पानी जम जायगा। पश्चात् इस यन्त्र को खौलते हुए पानी के वाष्प में रखते हैं। उष्णता पाकर पारा आप से ऊपर चढ़ जाता है। जब ऐसे स्थान तक पहुँचता है कि जिस से ऊपर नहीं चढ़ता, तब इस स्थान पर भी चिह्न कर देते हैं। इस चिह्न को क्वथनाङ्क (Boiling point) कहते हैं। जब ये दो स्थल मालूम हो चुकते हैं, अर्थात् एक तो सहननाङ्क का और दूसरा क्वथनाङ्क का, तब दो दर्जे नियत हो जाते हैं, जिन में भेद नहीं पड़ता। विदित रहे कि क्वथनाङ्क भिन्न भिन्न स्थलों के लिए भिन्न भिन्न है। स्थल जितना ऊँचा होगा थोड़े दर्जे की उष्णता से पानी खौलने लगेगा। जो दर्जा हमने इस यन्त्र में नियत किया है वह उन स्थलों के लिए है, जिनकी सतह समुद्र के पृष्ठ भाग के बराबर है।

३४—थर्मामेटर (Thermometer) में दर्जे नियत करने की दो रीतियाँ हैं; एक तो सेन्टिग्रेड (Centigrade) के नियम से और दूसरी फारेन्हाइट (Fahrenheit) के नियम से। पहिला इस तरह से बनता है—उन दोनों चिह्नों अर्थात् संहननाङ्क और क्वथनाङ्क के मध्य अन्तर के सौ विभाग कर देते हैं। क्वथनाङ्क पर सौ का अंक लिख देते हैं और संहननाङ्क पर शून्य; क्योंकि पूर्व काल में यह समझा जाता था कि संहननाङ्क शीत का सब से अन्तिम दर्जा है इस से अधिक शीत नहीं होती है, और उष्णता यहाँ पर लेश मात्र को नहीं रहती।

३५—फारेन्हाइट के नियम इस तरह पर हैं, कि संहननाङ्क पर बत्तीस का अङ्क लिखते हैं, और क्वथनाङ्क पर २१२ का, दोनों चिन्हों के मध्यान्तर के १८० विभाग करते हैं। हमारे भारतवर्ष में इसी फारेन्हाइट के थर्मामेटर का प्रचार है। इस नियम के अनुसार ३२ वाँ अङ्क संहननाङ्क है। आरोग्य मनुष्य के रक्त की स्वाभाविक उष्णता ९८ $\frac{2}{5}$ है, और इससे न्यून उष्णता अशक्तता को सूचक है, और इससे अधिक ज्वर की। यदि मनुष्य की उष्णता १०६ पर पहुँच जाय तो उसकी स्थिति शंकाजनक होती है।

३६—यदि फारेन्हाइट का दर्जा अवगत हो, तो उस से सेन्टिग्रेड का दर्जा इस प्रकार से निकालते हैं—फारेन्हाइट

के जाने हुए दर्जे से ३२ घटा कर जो शेष रहे उसको ५/९ से गुणा करते हैं, तो सेन्टिग्रेड का दर्जा निकल आता है। उदाहरणार्थ फारेन्हाइट का दर्जा ५० है तो सेन्टिग्रेड का दर्जा यों निकालेंगेः—

$$\frac{(५०-३२)\times ५}{९}=\frac{१८\times ५}{९}=१०$$

यदि सेन्टिग्रेड का दर्जा मालूम हो, तो उससे फारेन्हाइट का दर्जा इस प्रकार निकालेंगे। सेन्टिग्रेड के जाने हुए दर्जे को ९/५ से गुणा करके गुणन फल में ३२ जोड़ देंगे। उदाहरणार्थ सेन्टिग्रेड का दरजा १० है तो फारेन्हाइट का दर्जा यों निकालेंगेः—

$१०\times \frac{९}{५}+३२=१८+३२=५०$

३७—उष्णता और सर्दी दो विषय नहीं हैं। भूमितल में उष्णता के दर्जे की न्यूनता ही को सर्दी कहते हैं, क्योंकि पृथ्वी पर उष्णता के सर्वथा नहीं रहने का कोई दर्जा नहीं।

३८—प्रोफ़ेसर टिण्डल (Prof. Tyndall) ने बहुत जाँच के पश्चात् उष्णता की व्याख्या यों की हैः—

उष्णता एक प्रकार की गति है। यह गति चोट से, रगड़ से अथवा रासायनिक संयोग से वस्तु के एक एक अणु में स्थल को बिना त्याग किये उत्पन्न होती है। ये अणु ऐसे सूक्ष्म और इनकी गति इतनी चपल होती है, कि प्रबल सूक्ष्मदर्शक यंत्र (Micro-cope) के द्वारा भी नेत्र इनके देखने में असमर्थ हैं।

३९—पृथ्वी की उष्णता का भण्डार सूर्य है। सूर्य से किरणें ईथर Ether के द्वारा पृथ्वी तक पहुँचती हैं । ईथर अत्यन्त विरल और तरल पदार्थ हे। समस्त आकाश इस ईथर से परिपूरित है, कोई स्थल, कोई पिण्ड इस से खाली नहीं, और कहीं इस की रुकावट नहीं है । इस बात का यह आशय है, कि इस जगत् में कोई पिण्ड सम्पूर्ण एक नहीं है, प्रत्येक पिण्ड छोटा हो अथवा बडा सूक्ष्म अणुओ का बना हुआ है। ये अणु कितने ही पास पास क्यो न हों, इतने मिल नहीं जाते कि उन में कुछ अन्तर न रह जाय; प्रत्येक अणु अणु के अन्तर में ईथर उपस्थित हे ।

४०—सूर्य की प्रकाशित किरणें जो देखने में अत्यन्त श्वेत नजर आती हैं सात रगों से मिलकर बनी हें। लाल, नारङ्गी, पीला, हरा, आसमानी, नीला और कासनी । लाल रंग को उष्णता सब से अधिक है और कासनी की सब से न्यून, और इन देोनो के बीच के रंगों की उष्णता अनुक्रम से न्यून होती आई है। लाल रंग की सीमा पर उष्णता बहुत अधिक है, और कासनी की सीमा पर बहुत न्यून हे।

४१—उष्णता पिण्डो को दो प्रकार से पहुँचती हे, एक तो चलन (Conduction) से और दूसरे विसर्जन (Radiation,)से । प्रथम हम उदाहरण देकर चलन का अर्थ व्यक्त करते हें। जेसे लोहे की सलाई का एक सिरा अग्नि में रक्खा, तो उससे तप्त होते ही न्यूनाधिक पूरी सलाई में उष्णता

दौड़ गई। अब विसर्जन का उदाहरण सुनिए। सूर्य की किरणों से धूप पृथ्वी तक पहुंची, जहां से गर्मी और प्रकाश उचट कर, कमरे में पहुँचा, न सूर्य पृथ्वी पर उतर आया और न धूप कमरे के अन्दर गई, परन्तु सूय से उष्णता और प्रकाश पृथ्वी पर और पृथ्वी की धूप से गर्मी और प्रकाश कमरे में पहुंच गया। संक्षेपतः जब गर्म्मी किसी पिण्ड में उसी पिण्ड के अणु अणु से फैलती है तो उसको चलन कहते हैं; और जब ईथर के द्वारा पहुँचती है तो विसर्जन कहते हे। वायु गर्मी का चालक (Conductor of heat) नहीं है, इस में धूल के अणुओं के कारण से गर्मी के विसर्जन की शक्ति है।

४२—हम सुगम उदाहरण देकर इस विषय को बहुत स्पष्ट कर देते हैं:—पानी वायु को तरह उष्णता का अचालक (Non conductor of heat) है। यदि पानी किसी बर्तन में भर कर आग पर चढ़ाएँ, तो चलन से पानी तप्त नहीं होता, परन्तु उस के तप्त होने का कारण यह है, कि नीचे के परिमाणु प्रथम तप्त होते हैं, और हलके होकर ऊपर आते हैं; उनके स्थान पर ऊपर के शीतल और भारी परिमाणु नीचे पहुँचते हैं; इस रीति से परिवर्तन होकर थोड़े काल में पूरा पानी तप्त हो जाता है। यदि ऊपर के तल से पानी को उष्णता पहुँचाएं तो किसी रीति से पानी नीचे तक तप्त नहीं होगा। वायु भी इसी तरह गरम होता है। परन्तु वास्तव में तो न कोई वस्तु पूरी पूरी गर्मी को चालक है, और न

पूरी की पूरी गर्मी को अचालक। इन में चलन बहुत निर्बल और धातुओं में बहुत प्रबल होता है।

४३—हम ऊपर वर्णन कर आये हैं कि वायु के साथ सौ परमाणु में एक परमाणु वाष्प का मिला हुआ है; इस वाष्प के कारण से और धूल के अणुओं के कारण से भी, जो कि वायु में उपस्थित है, वायु में उष्णता को शोषण करने और छिटकाने की शक्ति है। जितनी गर्मी सूर्य से पृथ्वी की ओर आती है उस में से एक तृतीयांश से कुछ न्यून वायु में रुक जाती है, और इस एक तृतीयांश में से कुछ तो वायु शोषण कर लेता है और शेष को आकाश में प्रसारण कर देता है। बाकी ⅔ से कुछ अधिक पृथ्वी तक पहुँचती है, उस में से कुछ को पृथ्वी शोषण कर लेती है, और शेष को वायु में प्रसारण कर देती है। जो पिण्ड जल्दी से वायु को शोषण करके शीघ्र तप्त हो जाते हैं वे जब गर्मी का आना रुक जाता है, उसी शीघ्रता से गर्मी को निकाल कर (सब दूर फैला कर) शीघ्र शीतल हो जाते हैं। पृथ्वी भी ऐसा ही पिण्ड है। दिन को वह धूप से शीघ्र तप्त हो जाती है, और जब सूर्य अस्ताचल को प्राप्त हो जाता है, तब जिस उष्णता को दिन भर उसने शोषण किया था उस को निकालने लगती है, और वह उष्णता आकाश का मार्ग ग्रहण करती है, परन्तु वायु उक्त पानी के वाष्प की सहायता से इस उष्णता को ऊपर जाकर नष्ट होने से रोकता है। अतः वाष्प-पूरित वायु से

पृथ्वी को वही लाभ होता है, जो पक्षि-गण को परों से और चौपायो को खाल और बाल से। यदि वायु के साथ उक्त बाष्प संमिलित न होता, तो दिवस में उष्णता की अधिकता से और रात्रि में शीत की पीड़ा से जानवर और वनस्पति का पृथ्वी पर कोई चिन्ह भी शेष नहीं रहता। देख लो मध्य एशिया के मरुस्थल और अफ्रिका (Africa) के सहारा की यही दशा है; जहाँ दिन को पृथ्वी तवे के समान तप्त हो जाती है, और वायु के झोके दहकती हुई अग्नि की आँच से न्यून नहीं होते; और रात्रि को सर्दी भी इस कड़ाके का गिरती है कि मनुष्य को उस का सहन करना अत्यन्त कठिन होता है, कारण यह है कि इन मरुस्थलों का वायु अत्यन्त शुष्क और पानी के वाष्प से क़रीब क़रीब बिल्कुल ख़ाली है।

४४—हम ऊपर लिख आये हैं कि वायु को उष्णता दो ओर से पहुँचती है, कुछ तो सीधी सूर्य्य की किरणों से, और अधिकतर उस उष्णता से जो पृथ्वी की तरफ़ से निकल कर और छिटक कर ऊपर आती है। समस्त पृथ्वी पर सूर्य की किरणें एक समान नहीं पहुंचतीं; इसलिए जिस स्थान पर जितनी उष्णता सूर्य से पृथ्वी को पहुंचेगी उसी परिमाण से उस स्थान से गर्मी ऊपर जायगी। भूमध्य रेखा पर सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं, और वायु के थोड़े पटल (Volume) में से हो कर आती हैं, अतएव दोनों अयन रेखाओं के मध्य में समस्त भूमण्डल से उष्णता अधिक होती

है। भूमध्य रेखा से जितना उत्तर अथवा दक्षिण की तरफ़ बढ़ते जाइए किरणें विशेष तिरछी होती जाती हैं, और वायु के बड़े पटल में से होकर आती हैं। वायु में उष्णता की न्यूनाधिकता के मुख्य कारण ये हैं:—

(१) अक्षांश का अन्तर।
(२) किसी स्थल का नीचा अथवा ऊँचा होना।
(३) समुद्र से निकट अथवा दूर।
(४) पृथ्वी की स्थिति।
(५) वायु की दिशा।

४५—दूसरी बातों का विचार न करके यदि केवल अक्षांश पर ध्यान दिया जाय, तो प्रत्येक दर्जे अक्षांश पर एक दर्जा गर्मी का अन्तर पड़ेगा। एक दर्जा अक्षांश ७० मील का होता है। भूमध्य रेखा से उत्तर अथवा दक्षिण की तरफ़ जाने में न्यूनाधिक प्रति ७० मील पर एक दर्जा गर्मी न्यून होती जायगी।

४६—अक्षांश की अपेक्षा स्थल की उच्चता का प्रभाव वायु की उष्णता पर अधिकतर पड़ता है, अर्थात् स्थल जितना ऊंचा होगा वायु उतना ही शीतल होगा। कारण इसका यह है कि ऊपर का वायु नीचे के वायु से अधिक विरल होता है, इस कारण से ऊपर के वायु में उष्णता के शोषण करने की शक्ति कम होती जाती है। वायु का एक यह भी गुण है कि दबाव पड़ने से सिमटता है तो उस की उष्णता बढ़ती है;

और खुल कर फैलता है, तो उष्णता न्यून हो जाती है। और नीचे का दबा हुआ वायु खुल कर ऊपर जाता है तो शीतल हो जाता है। उदाहरण—

वायु को दबाने वाले यंत्र के द्वारा बहुत से वायु को दबा दबा कर एक बर्तन में भर देते हैं। वायु के दबाने के समय बर्तन अत्यन्त तप्त हो जाता है, उस को शीतल पानी से ठंढा कर लेते हैं। यदि इस बर्तन की डाट खोली जाय तो वायु फैलने लगेगा, और फैलने की स्थिति में अत्यन्त शीतल हो जायगा। जितना ऊपर जाइए वायु का पटल न्यून होता जाता है, और वाष्प भी कम होता जाता है; इसलिए जितनी उष्णता पृथ्वी से निकलती है बे-रोक आकाश में फैल जाती है, और सर्दी गर्मी नहीं बढ़ती है। समुद्र के समतल स्थानों से प्रथम एक सहस्र फ़ीट की ऊँचाई तक प्रत्येक १६२ फ़ीट पर एक दर्जा उष्णता न्यून होती है। एक सहस्र से लेकर दस सहस्र फ़ीट तक प्रति ४१७ फ़ीट एक दर्जा गर्मी घटती है। यह स्थिति तो न्यूनाधिक सारी पृथ्वी पर है, परन्तु हमारे भारतवर्ष में प्रथम कई सौ फ़ीट की ऊँचाई तक उष्णता की न्यूनता बहुत जल्दी जल्दी होती है, यहां तक कि आदि में तो ३२ ही फ़ीट की ऊँचाई पर एक दर्जा गर्मी न्यून हो जाती है; परन्तु ऊपर चल कर उष्णता बहुत कमी के साथ घटती है, लगभग प्रत्येक ३०० फ़ीट की ऊँचाई के

पीछे एक दर्जा उष्णता न्यून होती है। हिमालय पहाड़ के वे शिखर जोकि सोलह हज़ार फ़ीट से ऊंचे हैं, सर्वदा वर्फ़ से आच्छादित रहते हैं। अक्षांश के कारण से जो भेद गर्मी का सत्तर अथवा अस्सी मील में होता है, वही भेद स्थान की ऊँचाई के कारण से ३०० फ़ीट से हो जाता है। किसी किसी स्थल पर इस नियम के विरुद्ध भी देखने में आता है, अर्थात् ऊंचे स्थानों का वायु उन के आस पास की तराइयों से विशेष उष्ण होता है। यह स्थिति वहाँ देखने में आती है, जहां पहाड़ नग्न होते हैं, और आस पास की तराइयाँ सघन कानन से आच्छादित होती हैं। अनुमान से इसका कारण यह मालूम होता है, कि इन तराइयों की पृथ्वी घास इत्यादि से आच्छादित रहती है, और घास गर्मी का अचालक है, इस कारण से पृथ्वी के मध्य की उष्णता बहुत ही कमी के साथ ऊपर आती है; और वनस्पति से उष्णता बहुत शीघ्र निकलती और आकाश में फैलती जाती है, और पहाड़ों और सघन काननों के कारण से धूप इन तराइयों में नहीं आसकती, अतएव उष्णता का आगम तो बहुत न्यून होता है और निकलती अधिक है, क्योंकि वनस्पति से विसर्जन बहुतायत से होता है। इस के विपरीत नग्न पहाड़ों पर धूप प्रचण्ड पड़ती है। इन्हीं कारणों से ऐसे पहाड़ों पर तराइयों की अपेक्षा उष्णता विशेष होती है।

४७—पानी के बड़े बड़े आशयों को उष्णता और सर्दी के नाश करने की शक्ति है । पानी और पृथ्वी को समान तप्त करने के लिए पृथ्वी को जितनी उष्णता की आवश्यकता है उस से पानी को तप्त करने के लिए चतुर्गुण उष्णता की आवश्यकता है । इस के सिवाय सूर्य की किरणें बहुत दूर तक पानी म प्रवेश करने के पश्चात् जाकर पानी में उष्णता उत्पन्न करती हैं, इसलिए उक्त किरणों की उष्णता पानी के बड़े विभाग में फैल जाती है । सिवाय इसके पानी विचल वस्तु होने से, लहरें उसकी गर्मी को हर तरफ़ फैला देती हैं, एक स्थान पर इकट्ठा नहीं होने देतीं । विपरीत इस के जब सर्दी बढ़ती है, तब पृथ्वी की अपेक्षा पानी अधिक तप्त होता है । गर्मी का विसर्जन पानी के तल से उसी सुगमता से होता है जैसा पृथ्वी के तल से । परन्तु पानी शीतल होकर भारी हो जाता है, जब भारी हुआ तो नीचे चला जाता है, और उसके स्थान पर नीचे का पानी ऊपर आता है । यों पानी के तल पर विशेष सर्दी होने नहीं पाती । इस से अवश्यही पानी के पृष्ठ भाग का भी वायु न बहुत उष्ण न बहुत शीतल रहता है । शीत काल में उष्ण काल की अपेक्षा पानी से बाष्प भी बहुत कम उठता है, इसलिए पानी की उष्णता का न्यून होना, जो पानी से बाष्प उठने से शीघ्रतर होता है, शीत काल में कम होता है । इन्हीं कारणों के सबब से टापुओं की और समुद्र-तट की आबोहवा महाद्वीप के मध्य

विभागों की अपेक्षा विशेष समशीतोष्ण रहता है। ऋतु के परिवर्तन से इन स्थानो की आबोहवा में बहुत बड़ा अन्तर नहीं पड़ता, और न रात दिन की उष्णता में विशेष भेद रहता है। एडिनबरा (Edinburgh) और मास्को (Moscow) लगभग एक ही ऊंचाई पर स्थित हैं। एडिनबरा टापू में है, और मास्को महाद्वीप में। दोनो का अक्षांश एक है, अर्थात् दोनों लगभग ५६ उत्तर अक्षांश पर हैं। हम इन दोनों स्थानों की शीत और उष्ण काल की औसत गर्मी लिखते हैं, जिससे विदित होगा कि महाद्वीप और समुद्र का प्रभाव आबोहवा पर कितना पड़ता है।

	औसत गर्मी ग्रीष्म ऋतु की	औसत गर्मी शीतकाल की
एडिनबरा	५८	३८
मास्को	६२	१२

महाद्वीप के उन स्थानों में, जो भूमध्य रेखा के निकट हैं, उष्णता प्रचण्ड होती है, और जो ध्रुव के निकट हैं, वहाँ वैसी ही सर्दी अधिक पड़ती है।

४८—संक्षेपतः—

(१) वर्ष भर के औसत पर ध्यान देवें तो निःसन्देह विदित होगा कि समस्त भूमण्डल पर सब से अधिक उष्णता उस कटिबन्ध पर होती है, जो कि कर्क और मकर रेखा

के मध्य स्थित है । जितना इन दोनों रेखाओं से उत्तर या दक्षिण की तरफ़ बढ़ते जायँ, उतनी ही उष्णता न्यून होती जाती है ।

(२) एक ही अक्षांश (Latitude) पर स्थान जितना ऊँचा होगा, गर्मी उतनी ही न्यून होगी; जितना नीचा होगा, उष्णता अधिक होगी ।

(३) टापू और सागर तट की आबोहवा महाद्वीप की अपेक्षा विशेष समशीतोष्ण होती है ।

——:o:——

उष्णता का रात और दिन में अन्तर ।

४९—रात दिन में गर्मी का सब से अधिक अन्तर शुष्कतर स्थलों में होता है । उदाहरणार्थ अफ़्रिका (Africa) का सहारा, अरब और राजपूताने के मरुस्थल इत्यादि । इन स्थलों में रात दिन की उष्णता में ४० दर्जे से भी अधिक अन्तर होता है । इस विषय में हमारा भारतवर्ष समस्त भूमण्डल का छोटा सा नमूना है । पंजाब में तो दिन और रात की उष्णता में ४० दर्जे का लगभग अन्तर होता है; मध्य प्रदेश में बीस से लेकर तीस दर्जे तक का; कलकत्ते में १८ दर्जे का; और बम्बई में ८ दर्जे का । अक्षांश के कारण से भी दिन

और रात की गर्मी के अन्तर पर बड़ा प्रभाव पड़ता है; भूमध्य रेखा के निकट में रात दिन की उष्णता में बहुधा बड़ा फर्क पड़ता है । जितने भूमध्य रेखा से उत्तर अथवा दक्षिण को बढ़ते जाइए, रात दिन की उष्णता में अन्तर न्यून होता जायगा । शीत कटिबन्ध तक पहुँचते पहुँचते रात और दिवस की उष्णता में अन्तर नहीं रहता । कारण इसका प्रकट है, वर्णन करने की आवश्यकता नहीं । रेखा से जितने आगे बढ़िए, सूर्य्य कम कम ऊंचा होता है, और रात्रि और दिवस के अन्तर का समय अधिक होता जाता है । उष्ण काल में दिवस अधिक बढ़ जाता है, और रात्रि अत्यन्त छोटी हो जाती है; इसके विपरीत शीतकाल में रात्रि बहुत बड़ी, दिवस बहुत छोटा हो जाता है । इस कारण से रात्रि और दिवस की सर्दी और गर्मी में बहुत ही न्यून भेद पड़ता है । ऊँचे स्थलों में नीचे स्थलों की अपेक्षा रात्रि और दिवस की शीतोष्णता में न्यून अन्तर पडता है । मसूरी और रानीखेत ६००० फ़ीट की ऊँचाई पर स्थित हैं, इन स्थानों में रात्रि और दिवस की ऊष्णता में १३ अथवा १५ दर्जे का अन्तर पड़ता है । परन्तु बरेली और रुड़की में जो कि पूर्वोक्त स्थानों से निकट हैं, नीचे होने के कारण से उनमें २४ अथवा २५ दर्जे का अन्तर पड़ता है ।

—:o:—

छठवाँ अध्याय ।

—:o:—

वायु का चलना ।

५०—जब से वायु ने भूगोल को आच्छादित किया है, उसी समय से यह जानता ही नहीं कि विश्रांति किस को कहते हैं। जब तक पृथ्वी का अस्तित्व है, यह चुप बैठने वाला नहीं। वायु का प्रत्येक परमाणु सर्वदा प्रत्येक स्थल में मानों इस उपाय में निमग्न है, कि समस्त भूमण्डल के वायु में एकसी उष्णता, एकसा गाढ़ापन, एकसा बोझ रहे। परन्तु सहस्रशः कारण एक दूसरे के विपरीत इस उपाय को भंग करने के लिए उत्पन्न होते रहते हैं। कहीं साम्य स्थिति में थोड़ा सा बिगाड़ पड़ा कि तरफ़ तरफ़ से वायु पूर्ति करने को चला। इस हलचल से नये नये बिगाड़ उत्पन्न हुए, जिनकी रोक के वास्ते नई नई हलचल वायु में आरम्भ हुई। अतएव इस रीति से वायु का चलना ऐसा स्थिर हो गया है, कि जो कभी रुकने वाला नहीं है। बात यह है, कि वायु बड़ाही परिभ्रमण करने वाला है; कोई परमाणु वायु का ऐसा नहीं जिसने कुछ ही काल में करोडों स्थान नहीं बदले हों। जो परमाणु आज पानी में मिलकर समुद्र-तल में है, कल वही परमाणु कदाचित् इतनी ऊंचाई पर होगा, कि जहाँ से

हिमालय के शिखर भी नीचे दिखाई दें। जो वायु इस समय चित्त प्रफुल्लित करने वाला बनकर, वन उपवन का आनन्द उठाता, पुष्प का मकरन्द पान करता, और उससे सुवासित होकर चहुँ ओर चित्त को आह्लाद देता फिरता है, आश्चर्य नहीं कि वही वायु किसी दूसरे समय दुर्गन्धित स्थानों में जाकर और वहाँ की दुर्गन्ध को सब तरफ़ फैलाकर कई प्रकार के रोगों का कारण बने। वायु का भ्रमण किसी स्थान के लिए नियत नहीं। यदि आज दीन और ऐश्वर्य्य-रहित मनुष्यों के तृणनिर्मित तिमिर-पूरित कुटियों में ठोकरें खाता फिरता है, कदाचित् वही दूसरे दिन राजा महाराजा और धनियों के उच्च विशाल प्रशस्त चित्ताकर्षक प्रासादों में क्रीड़ा करता होगा। वायु अपने परिभ्रमणों में नये नये स्वाँग धारण करता है। अरबस्थान के मरुस्थल में और अफ्रिका के सहारा (Sahara) में पहुँचकर विषैली लू बन जाता है, और इस स्थिति में जहाँ कहाँ पहुँच जाता है, जानवर और मनुष्यों के प्राण हरण करता है। बड़े बड़े समुद्रों पर तूफ़ान के भीषण रूप को धारण करके बड़ी ही आफ़त मचा देता है। यह सब कुछ है, परन्तु वायु के संचार ही से सब आनन्द है। यदि वायु चलना बन्द हो जाय तो जगत् का सब काम बन्द हो जाय।

५१—विशेष करके वायु के चलने का कारण सूर्य की उष्णता है। वायु उष्ण होकर फैलता है, और फैलने से

हलका होकर ऊपर जाता है; इसी प्रकार शीतल होने से वायु सिमटता है, सिमटने से भारी होकर नीचे आता है। यही वायु के चलने का नियम है। इसी नियम के अनुसार दीप की शिखा और अग्नि की ज्वाला ऊपर को ओर रहती है ।

५२—वायु के चलने का दूसरा बड़ा कारण इसके भार की कमोवेशी है। बाष्प-मिश्रित वायु हलका, और शुष्क वायु बोझल होता है। यदि किसी स्थान में वायु का दबाव कम होता है, तो दूसरे स्थान से, जहाँ वायु का दबाव विशेष होता है, वायु इस तरफ़ बढ़ता है, ताकि दबाव बराबर हो जाय।

५३—सूर्य की किरणें, जो पृथ्वी पर पड़ती हैं, उनसे भूतल तप्त हो जाता है; और जो समुद्र पर पड़ती हैं, उनके कारण से समुद्र से बाष्प उत्पन्न होता है । भूतल की गर्मी के विसर्जन से वायु, जो कि भूमि से लगा हुआ होता है, उष्ण हो जाता है, और गर्म होने से हलका होकर ऊपर उठता है। समुद्र से जो वाष्प उत्पन्न होता है, वह भी हलका होता है। इस कारण वाष्प-मिश्रित वायु का दबाव न्यून होता है। भूमितल भाँति भाँति के पदार्थों से मिलकर बना है। और ये सब पदार्थ सूर्य्य की उष्णता से समान-भाव से उष्ण नहीं होते। यदि एक क्षण के लिए यह माना जाय कि सूर्य्य की उष्णता प्रत्येक पदार्थ पर बराबर भी पहुँचे, तो भी भेद अवश्य रहेगा। क्योंकि कोई कोई पदार्थों में दूसरे पदार्थों की अपेक्षा उष्णता को

शोषण करने की विशेष शक्ति है। इस कारण भिन्न पदार्थों से भिन्न भिन्न दर्जे की गर्मी भूतल से मिले हुए वायु को प्राप्त होगी। दिन को वृक्षों की छाया में, घरों के भीतर, पानी के विभागों पर, सघन कानन और सस्य सम्पन्न क्षेत्रों पर सूर्य्य की किरणों का प्रभाव गृहों की छतों, चटानों, मरुस्थलों इत्यादि की अपेक्षा बहुत ही न्यून होता है। इसलिए यदि कोई पृथ्वी का विभाग सूर्य्य की किरणों से उष्ण होता है, और उसी समय पास के स्थानों में थोड़ी सी सर्दी होती है, तो तप्त स्थान से वायु हलका होने के कारण ऊपर जाता है, अतएव इस स्थान के लिए उतने ही वायु की आवश्यकता होती है, जितना वहाँ से ऊपर को प्रस्थान कर गया है। निःसन्देह चारों ओर से वायु इस स्थान की ओर मुख करता है। इस प्रकार से दो चालें वायु में उत्पन्न हो जाती हैं, एक तो नीचे से ऊपर की तरफ़, दूसरी चारों ओर से पृथ्वीतल के बराबर। संक्षेपतः वायु के चलने के दो कारण हैं, एक तो उष्णता का न्यून और विशेष होना, और दूसरा भार की घटा बढ़ी अर्थात् वायु के दबाव का घटना बढ़ना। वायु के लिए भार की अपेक्षा दबाव शब्द का उपयोग विशेष योग्य है, क्योंकि भार केवल उस दबाव का नाम है, जो ऊपर की तरफ़ से नीचे की तरफ़ होता है, परन्तु वायु का दबाव सब तरफ़ एकसा होता है, चाहे ऊपर से हो अथवा नीचे से हो अथवा चारों ओर से हो। हम सबसे प्रथम उन हवाओं का

वर्णन करते हैं, जो कि पृथ्वी के एकही भाग में बराबर वर्ष भर एकही दिशा को चला करती हैं, और ट्रेड विन्ड्स (Trade Winds) के नाम से प्रसिद्ध हैं।

ट्रेड विन्ड्स (Trade Winds) व्यापारी हवाएँ।

५४—हम ट्रेड विन्ड्स का शाब्दिक अनुवाद व्यापारी हवाएँ करते हैं; इनको इस नाम से पुकारने का कारण यह है, कि ये हवाएँ उस कटिबन्ध में, जो भूमध्य रेखा के दोनों तरफ़ लगभग ३० उत्तर अक्षांश और ३० दक्षिण अक्षांश के मध्य है, पृथ्वी और समुद्र दोनों पै, वर्ष भर एकही दिशा में चलती हैं। इन हवाओं का यह गुण जानने से जहाज़ों के चलाने में बहुत सहायता मिली, और जहाज़ों के चलाने की सुगमता से व्यापार में उन्नति हुई, इस लिए इन हवाओ को यह उपाधि दी गई। जहाँ जहाँ उष्ण कटिबन्ध में सूर्य सिर पर पहुँचता है, और पृथ्वी पर किरणें सीधी पड़ती हैं, उन स्थलों की हवा प्रचण्ड ऊष्णता से विरल होकर फैलती है, और फैलने से हलकी होकर ऊपर जाती है, इसका स्थान लेने के लिये शीत कटिबन्ध की हवा इस तरफ़ बढ़ती है। यदि पृथ्वी स्थिर होती, तो ऊपर चढ़ी हुई हवा भूमध्य रेखा से दक्षिण की हवा बनकर उत्तर ध्रुव की तरफ़ और उत्तर का हवा बनकर दक्षिण ध्रुव की तरफ़ जाया करती। और उत्तर ध्रुव से उत्तर की हवा और दक्षिण ध्रुव से दक्षिण की

हवा भूतल से मिली हुई भूमध्य रेखा की तरफ़ आया करती। परन्तु पृथ्वी अपने अक्ष पर पश्चिम से पूर्व की तरफ़ घूमती है, और इस घूमने के कारण हवाएं अपना मार्ग त्याग करके अन्य पथ ग्रहण कर लेती हैं, जिस की हालत हम आगे चल कर वर्णन करेंगे।

५५—फ़ान्स (France) के एक गणित-शास्त्रज्ञ ने सप्रमाण निर्णय किया है, कि "ऐसा कोई पदार्थ, जो कि आप से आप चल सकता हो, पृथ्वी के ऊपर किसी तरफ़ चले, तो पृथ्वी के घूमने के कारण उसके चलने में फेर अवश्य उत्पन्न होगा, इस प्रकार से, कि उत्तरी गोलार्ध में यह फेर दाहिनी ओर होगा, और दक्षिण गोलार्ध में वाम भाग की तरफ़ होगा।"

५६—जब वायु उत्तर ध्रुव से उत्तर का वायु बन कर भूमध्य रेखा की तरफ़ बढ़ता है, तो पूर्वोक्त नियम के अनुसार पृथ्वी के घूमने के कारण दाहिनो ओर को घूम जाता है। इस घूमने को कोई कारण रोकने वाला न होता तो मुड़ते मुड़ते उसकी चाल गोलाकार हो जाती। परन्तु इस घुमाव के कारण दाहिनी ओर वायु की निबिड़ता विशेष और वाम भाग में न्यून हो जाता है। जब निबिड़ता न्यून हुई तो दबाव भी न्यून हो जाता है, जिससे दबाव को बराबर करने के लिए फिर वायु वाम भाग को मुड़ने की इच्छा करता है। इस बार बार की मोड़ तोड़ से न वायु

का संचार उत्तर दक्षिण होने पाता है, और न गोलाकार, किन्तु दोनों स्थितियों के बीचों बीच की स्थिति ग्रहण करता है। और वह वायु जो प्रथम उत्तर वायु होकर चला था, ईशान का वायु होकर चलता है, और उष्ण कटिबन्ध तक पहुँचते पहुँचते लगभग पूर्व वायु हो जाता है। इसी तरह दक्षिण गोलार्ध में, प्रथम, दक्षिण ध्रुव की तरफ़ से दक्षिण वायु होकर भूमध्य रेखा की तरफ़ बढ़ता है, पुनः पूर्वोक्त नियम के अनुसार वाम भाग की तरफ़ मुड़ता है, तदनंतर उपर्युक्त कारणों से मुड़कर आग्नेय कोण का होकर चलने लगता है, और उष्ण कटिबन्ध तक पचहुँते पचहुँते यह भी लगभग पूर्वी वायु हो जाता है। इन्हीं हवाओं को ट्रेडविन्ड्स कहते हैं। ये हवाएं वर्ष भर बराबर एकही दिशा में, अर्थात् पूर्व से पश्चिम को, एटलान्टिक महासागर (Atlantic Ocean) और पेसिफ़िक महासागर (Pacific Ocean) के बड़े विभाग में और आफ्रिका के सहारा इत्यादि में चला करती हैं। उत्तरी एटलान्टिक में, शीत काल में २२ दर्जे उत्तर अक्षांश तक, और उष्ण काल में ३५ दर्जे उत्तर अक्षांश तक चलती हैं। दक्षिण पूर्वोक्त महासागर में, शीत काल में १८ दर्जे दक्षिण अक्षांश तक, और उष्ण काल में २८ दर्जे दक्षिण अक्षांश तक चलती हैं। पेसिफ़िक महासागर में, उत्तर में २१ दर्जे तक शीत काल में, और ३१ दर्जे तक उष्ण काल में चलती हैं; और दक्षिण में शीत काल में २३ दर्जे तक

और उष्ण काल में ३० दर्जे तक चलती हैं। विशेष गुण ट्रेडविन्ड्स का यह है, कि मध्यम प्रकार की चाल से नियत दिशा में चला करती हैं; अर्थात् प्रभात में तीव्र होती हैं, मध्यान्ह में मंद चलती हैं, और सायङ्काल में पुनः तीव्र हो जाती हैं। समुद्र के तट के निकट पहुँच कर इनका बल बहुत न्यून हो जाता है, और समुद्र से १५ या २० मील चल कर ट्रेडविन्ड्स का अस्तित्व नहीं रहता। दोनों ट्रेडविन्ड्स अर्थात् उत्तरी और दक्षिणी मिल कर एक होकर कभी नहीं चलतीं। दोनों के बीच में डोलड्रम (Doldrum) ऐसा होता है, कि जिसका वायु इधर उधर नहीं चलता, केवल नीचे से ऊपर को जाता है। यह डोलड्रम ऋतु के अनुसार अपना स्थान बदलता रहता है और सर्वदा एक ही अक्षांश पर स्थित नहीं रहता, परन्तु भूमध्यरेखा से कभी बाहर नहीं जाता। इस डोलड्रम की चौड़ाई एटलान्टिक में ३५० और पेसिफिक में २०० मील होती है, परन्तु चौड़ाई सर्वदा एक समान नहीं रहती, इस प्रकार से घटती बढ़ती है कि न ३५० से अधिक होती है और न २०० से न्यून।

५७—हिन्द महासागर (Indian Ocean) में ट्रेडविन्ड्स १० उत्तर अक्षांश से ३० दक्षिण अक्षांश तक तो बराबर वर्ष भर चलती हैं, परन्तु १० दक्षिण अक्षांश से लेकर उत्तरी ट्रेडविन्ड्स की हद तक प्रत्येक षण्मास में हवा बदला करती है। इन हवाओं को मौसमी हवाएं

(Monsoon) कहते हैं । प्रत्येक षण्मास में जब हवा दिशा बदलती है, मास सवा मास तक हवा किसी नियत दिशा में नहीं चलती; किन्तु सर्वदा रुख बदलती रहती है, और एक हल चल मची रहती है, जिससे बहुत करके तूफ़ान आता है और जहाज़ों के डूबने की आशंका होती है ।

५८—हिन्दुस्तान में मोसमी हवाएं दो हैं, एक वह जो कि भूमध्यरेखा के दक्षिण में चलती है, और दूसरी इस रेखा के उत्तर में चलती है । ये हवाएं अफ़्रिका के पूर्व तट से लेकर चीन के पूर्व तट तक चलती हैं ।

५९—तीन दक्षिण अक्षांश से लेकर १० दक्षिण अक्षांश तक ट्रेडविन्ड्स एप्रिल से ऑक्टोबर तक चलती हैं, परन्तु ऑक्टोबर से एप्रिल तक मोसमी हवाएं चलती है । भूमध्य रेखा के उत्तर में ऑक्टोबर से एप्रिल तक ट्रेडविन्ड्स चलती हैं परन्तु एप्रिल से ऑक्टोबर तक मोसमी हवाएं चलती हैं । इनके चलने की नियत दिशाएं तो दक्षिण और पश्चिम से उत्तर और पूर्व है, परन्तु शुष्कता के कारण से इसमें भेद पड़ता है, जैसे कि मध्य हिन्दुस्तान से ऊपर के विभाग में, सब से निकट तर समुद्र का विभाग बंगाल की खाड़ी है, जोकि आग्नेय कोण में स्थित है, यहां बहुत करके वर्षा की हवा आग्नेय कोण में से आती है । वर्षा के बिना यों भी पूर्वोक्त हिन्दुस्तान के विभाग में पूर्वी हवा चलती है तो आर्द्र होती है । हमारा भारत वर्ष ऐसा सरसब्ज़ और जलपूरित है यह सब इन्हीं मोसमी हवाओं की कृपा का कारण

है। जब कि दूसरे देशों में, जो उन्हीं अक्षांशों पै स्थित हैं जिन में अपना हिन्दुस्थान है, प्रचण्ड उष्णता होती है, तब हमारे देशमें वर्षा की झड़ियाँ मची रहती हैं।

६०—हम ऊपर लिख आये हैं, कि उत्तर और दक्षिण ट्रेडविन्ड्स के मध्यमें डोलड्रम है, जिस में हवा नीचे से ऊपर को जाती है। इस डोलड्रम में वायु का दबाव बहुत न्यून होता है। जनवरी में पूर्वोक्त डोलड्रम भूमध्य रेखा पर होता है, परन्तु जूलाई में, जब सूर्य कर्क-राशिगत होता है, तब डोलड्रम उत्तर की तरफ़ बढ़कर समुद्र से चलकर स्थल पर आ जाता है, और हिन्दुस्थान, चीन, ब्रह्मदेश, हब्श इत्यादि में वर्षा का कारण होता है।

६१—अब तक हमने उस हवा का वर्णन किया है ज़ो दोनों ध्रुवों से भूमध्य रेखा की तरफ़ पृथ्वीतल से मिली हुई जाती है। अब उस का वर्णन करते हैं, जो भूमध्य रेखा के निकट से उष्ण होकर ऊपर जाती है। यह ऊपर चढ़ी हुई हवा ऊपर शीतल होकर उतरती हुई दोनों ध्रुवों की तरफ़ प्रस्थान करती है। यदि पृथ्वी घूमती न होती, तो यह हवा सीधी ध्रुव की तरफ़ बढ़ कर कहीं धीरे धीरे पृथ्वी पर उतर आती, और दिशा बदल कर पृथ्वी से मिली हुई चलकर भूमध्य रेखा पर पुनः आजाती परन्तु पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमती है, इस लिए पूर्वोक्त नियम के अनुसार उत्तर ध्रुव की तरफ़ जाने वाली हवा दाहिनी ओर फिरती है, यहां तक कि

यदि कोई कारण इस को रोकने वाला न होता तो घूमकर भूमध्य रेखा की तरफ़ लौट आती ; परन्तु इस हवा के मुड़ने में दाहिनी ओर गाढ़ा पन बढ़ जाता है, और वाम भाग पर घट जाता है, इस लिए गाढ़ेपन को बराबर करने के लिए पुनः उस की चाल में मोड़ पैदा होता है इस लिए उतरती हुई हवा ३५ उत्तर अक्षांश के निकट पृथ्वी पर पहुंच कर, पूर्व की तरफ़ चलने लगती है । यदि कोई हवा इस स्थान पर विपरीत दिशा से चलती है, तो उससे पराजित होकर वह भी उसका साथ देती है । भूमध्य रेखा के दक्षिण में भी यह दशा होती है, परन्तु वहां दाहिनी ओर मुड़ने के बदले वाम भाग को मुड़ती है, और अन्त में ३० अक्षांश पर पश्चिमी हवा होकर चलती है । उष्ण कटिबन्ध में यह हवा बहुत ऊंची रहती है, और उस कटिबन्ध को छोड़ कर, जहां मोसमी हवाएँ चलती हैं, सर्वदा यह हवा भूतल की हवा से उलटी चलती है । यदि भूतल पर ईशान कोण की चलरही है, तो सोलह हज़ार फ़ीट की ऊंचाई पर आग्नेय कोण की हवा चलती होगी । यह स्थिति ऊंचे बादलों की चाल और ज्वालामुखी पहाड़ों के धूम से विदित होती है ।

६२—स्मरण रहे, कि ३० अक्षांश पर गोलार्ध के क्षेत्रफल के दो बराबर भाग हो जाते हैं, और इस अक्षांश पर वायु का दबाव समस्त भूतल से अधिक तर रहता है । कारण इसका यह है, कि ध्रुव और भूमध्य रेखा दोनों तरफ़ की

हवाएं इसी अक्षांश पर पहुंच कर अपना मार्ग बदलती हैं, इस कारण से यहां हवा का गाढ़ापन बढ़ जाता है, जब गाढ़ापन विशेष हुआ तो दवाव भी बढ़ जायगा। भूमध्य रेखा पर और उत्तर में ३५ अक्षांश पर तथा दक्षिण में ३० अक्षांश पर वायु अत्यंत मन्दगति से चलता है।

६३—इस सब वर्णन का सारांश यह है, कि वायु के दो बड़े चक्र हैं, प्रत्येक का केन्द्र ध्रुव है अर्थात् एक का केन्द्र उत्तर ध्रुव और दूसरे का दक्षिण ध्रुव है। इन दोनों चक्रो में वायु का संचार उस दिशा में होता है, जिस (दिशा) में पृथ्वी अपने अक्ष पर संभ्रमण करती है। भूमध्य रेखा के निकट दोनों तरफ़ एक एक कटिबन्ध है, जिस में वायु का संचार भूमि-भ्रमण के विपरीत दिशा में होता है। इन दोनों कटिबन्धों में जो हवाएं चलती हैं उन्हीं का नाम ट्रेडविन्ड्स हैं। ट्रेड विन्ड्स के कटिबन्ध और ध्रुव चक्र के मध्य में जो कटिबन्ध है, वहां वायु का गाढ़ापन और दवाव बहुत विशेष है। यह कटिबन्ध उत्तर में ३५ दर्जे और दक्षिण में ३० दर्जे अक्षांश पर स्थित है। दक्षिण ध्रुव के परितः वायु का दवाव बहुत न्यून है, और इसी कारण वायव्य कोण का वायु प्रचण्ड चला करता है।

६४—यहां तक जो कुछ लिखा गया इस से प्रकट है, कि उष्ण कटिबन्ध और उसके निकट अकस्मात् घटना के अतिरिक्त हवाएं नियत दिशाओं में चलती हैं। इसके प्रति-

कुल दानों समशीतोष्ण कटिबन्धों में जहां कोई दिशा नियत नहीं, हर तरफ़ का वायु चलता है । कभी ध्रुव की तरफ़ का वायु प्रबल होता है, और कभी भूमध्य रेखा की ओर का। विशेषतः उष्ण कटिबन्ध की अपेक्षा समशीतोष्ण कटिबन्ध में वायु तीव्र चला करता है । जो स्थान समुद्र के तट पर स्थित हैं, ख़ास करके उष्ण कटिबन्ध में, वहां लग भग ९ वा १० बजे प्रातः काल से चार पांच बजे सायङ्काल तक वायु समुद्र से पृथ्वी की तरफ़ चलता है, और सूर्य-अस्त से प्रातः काल तक पृथ्वी से समुद्र की तरफ़। कारण इसका प्रकट है, दिन को पृथ्वी सूर्य की उष्णता से बहुत शीघ्र तप्त हो जाती है, इसलिए जो वायु भूतल से मिला होता है उष्ण होकर फैलता है, और फैलने से हलका होकर ऊपर जाता है, और उसके स्थान पै समुद्र से शीतल वायु पृथ्वी की ओर आता है । सूर्यास्त के पश्चात् पृथ्वी से उष्णता शीघ्र तर निकलती है, क्योंकि पृथ्वी में पानी की अपेक्षा उष्णता को निकालने और फैलाने की शक्ति विशेष है, इसलिए पृथ्वी की तरफ़ से शीतल वायु रात भर समुद्र की तरफ़ चला करता है । यही कारण है, कि उष्ण कटिबन्ध में समुद्र तट के स्थान और टापुओं की आबोहवा विशेष उष्ण नहीं होती, सर्वदा मध्यम स्थिति में रहती है ।

६९—वायु के तीव्र और मन्द चलने के बहुत से कारण हैं । प्रायः दोनों ध्रुवों के परितः और भूमध्य रेखा पर वायु

की गति इतनी मन्द होती है कि मानों स्थिर ही है। जितना इन स्थानों से दूर होते जाइए, वायु की गति तीव्र होती जाती है। ४५-५० अक्षांश पर वायु अत्यन्त तीव्र चलता है। एक ही अक्षांश पर भूमितल की अपेक्षा समुद्र पर वायु विशेष तीव्र चलता है। भूमितल पर भी खुले और हमवार मैदानों में वायु तीव्र चलता है, और सघन वनों और ऊँचे नीचे स्थानों में मन्द।

६६—हमारे भारतवर्ष में तो वायु के संचार की यह स्थिति है, कि यदि बम्बई और कराची में वायु की चाल ४०० मील प्रति दिन है, तो ५०० मील की दूरी पर अर्थात् इलाहाबाद पहुंचते पहुंचते उसकी गति चतुर्थांश अर्थात् सवा सौ मील भी प्रति दिन में नहीं रहती। पृथ्वी तल की अपेक्षा उच्च स्थलों में वायु का संचार बहुत तीव्र होता है। बादल के संचार के अवलोकन से अवगत हुआ है, कि १६०० फ़ीट की ऊँचाई पर जो गति बादलों की होती है, उस से चौगनी उस बादल की होती है, जो २९००० फ़ीट की ऊंचाई पर होता है। मिस्टर लुनार्डो एक ग़ुब्बारे में बैठ कर उड़े थे। इनका कथन है कि भूमितल पर उस समय वायु अत्यन्त मंद गति में था, परन्तु जब ग़ुब्बारा अपनी उच्चता की सीमा पर पहुंचा, तब वहां वायु इतना तीव्र था, कि ग़ुब्बारा ७० मील प्रत्येक घण्टे की चाल से जाता था।

६७—वर्षा का संबंध वायु की भिन्न भिन्न स्थिति के साथ है। समस्त भूमण्डल की वर्षा इसी हवा के चक्र के साथ,

जिसका कि वर्णन ऊपर हुआ, और ऋतु के परिवर्त्तन के साथ, जिसका कि वायु पर विशेष प्रभाव पड़ता है, संबन्ध रखती है। भूमध्यरेखा पर न वायु किसी नियत दिशा में चलता है, न कभी ऋतु का परिवर्तन होता है, इस कारण यहाँ पर वर्षा के लिए कोई ऋतु नियत नहीं। सर्वदा सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं, जिन से बाष्प समुद्र से उठता है, इस बाष्प से भरा हुआ वायु ऊपर जाता है, ऊपर के शीत से बाष्प में गाढ़ापन आने लगता है, बाष्प के गाढ़ेपन से बादल बनते हैं, और सरदी पाकर बादल बरसने लगते हैं। वहां सर्वदा यही स्थिति रहती है। जब सूर्य सायन मेष से होकर कर्क की तरफ़ बढ़ता है, तो वर्षा का कटिबन्ध अर्थात् डोलड्रम साथ ही साथ उत्तर की तरफ़ बढ़ता है। जहाँ जहाँ इस का संचार होता है, वहां वहाँ वर्षा की प्रवृत्ति होती जाती है। जुलाई में सूर्य कर्क राशि का होता है उस समय पूर्वोक्त डोलड्रम चीन, ब्रह्मदेश, अपने भारतवर्ष और हब्श इत्यादि में पहुंचता है; इस लिए इस समय इन सब स्थलों में वर्षा होती है। जब सूर्य तुला राशि से होकर मकर की तरफ़ जाता है, तो डोलड्रम भी उसी के साथ साथ दक्षिण की तरफ़ जाता है। वर्षा की दोड़ २० उत्तर अक्षांश से लेकर २० दक्षिण अक्षांश तक है। अतएव ठीक ठीक वर्षा इसी कटिबन्ध में होती है। परन्तु जहां मौसमी हवाएँ चलती हैं, जिनका पूरा वर्णन ऊपर हो चुका है, वर्षा-काल इन सीमाओं

ही में प्रतिबन्धित नहीं रहता; इन सीमाओं से निकल कर ३० अक्षांश से भी अधिक आगे बढ़ जाता है, परन्तु जितना आगे बढ़ता है वर्षा उतनी ही न्यूनता के साथ होती है।

सातवाँ अध्याय।

—:o:—

कोहरा और बादल।

६८—यो तो जानवर और वनस्पति के प्राणो का सर्वस्व वायु पर अवलम्बित है, परन्तु वायु के असख्य उपकारो में से एक यह है, कि वायु अपने मस्तक पर पानी का योग्य परिमाण लिये हुए चारों ओर अटन करता रहता है, जहाँ जिस रूप में पानी की आवश्यकता देखता है, वहाँ उसी रूप में उसे तय्यार कर देता है। कहीं कोहरा बना कर उस के द्वारा वनस्पति को प्रचण्ड शीत से ठिठुरने से बचाता है, किसी स्थान पर दिन भर के परिताप से सतप्त पुष्प वाटिकाओं के ताजा करने के लिए रात को ओस तय्यार करता है। सबसे बढ़ कर यह है कि बहुत से पानी को वाष्प के रूप में ऊपर लेजा कर बादल बनाता है, और इन बादलों को चारों ओर अपने अदृश्य परों पर लिए उड़ता फिरता है, फिर इनसे यथायोग्य स्थानो पर जल वर्षा कर क्षेत्रों में सस्य, आरामो में मधुर फला वलम्बि वृक्ष, पुष्पपूरित गुल्म वाटिकाओं में नाना प्रकार की लताएँ और शाद्वलों में नव तृणो को उत्पन्न करता है। इसी वायु ही की महान् उदारता और दातव्य शक्ति के कारण हमारे वृक्ष फल से और अन्नागार धान्य से परिपूरित होते हैं। जहाँ वायु अपने सर्व हित कर्ता हस्त से कृपा नहीं करता, वहाँ नग्न पहाड़ हैं, या भयङ्कर मरुस्थल।

६९—पहिले वर्णन कर चुके हैं, कि जल का वाष्प अदृश्य रूप में कभी न्यून कभी विशेष सर्वदा वायु में उपस्थित रहता है। वायु देखने में कैसा ही शुष्क क्यों न हो, वाष्प से रिक्त नहीं रहता। परन्तु पुर्वोक्त वाष्प अत्यन्त पारदर्शक होता है, जिससे किसी तरह दिखाई नहीं देता। धूप और चाँदनी बाष्पपूरित वायु में वैसी ही स्वच्छ होती है, जैसी शुष्कवायु में। इसलिए केवल दृष्टि से शुष्क और बाष्पमिश्रित वायु में भेद जानना अशक्य है। इस वाष्प के कारण वायु की पारदर्शकता में उसी समय व्यत्यय आता है, जब कि बाष्प में गाढ़ापन पैदा होता है, जिस का वर्णन अभी आयगा।

७०—वायु में बाष्प उपस्थित रहने का कारण यह है, कि वायु नमी का शोषक है। उस अवस्था के अतिरिक्त कि जब स्वयं नमी से परिपूरित हो, वायु प्रत्येक वस्तु से नमी शोषण करता है; परन्तु ध्यान रहे कि वायु शायद ही ऐसा नमी से पूरित होता है, कि पुनः उसमें उसके शोषण की शक्ति नहीं रहती। वायु के इस गुण के कारण किसी वस्तु में नमी रहने नहीं पाती; भीगा वस्त्र फैला दिया जाय, तो थोड़ी देर में सूख जायगा; किसी पात्र में पानी भरा हो, और कुछ दिन वह खुला रक्खा रहे, तो रिक्त हो जायगा; हरित तृण को काट कर और वृक्ष के हरे पत्ते तोड़कर डाल दिये जायँ, तो कुछ काल में वे शुष्क हो जायँगे। जिस बात को सब लोग बात चीत में सूखना कहते हैं यह वास्तव में वस्तुओं से वायु में नमी के

शोषण होने का नाम है। इसके सिवाय भील, सर, सरिता, समुद्र आदि से रात दिन पानी बाष्प बनकर वायु में मिलता जाता है। जानवरों के देहो से भी बहुत सी नमी वायु में मिला करती है। और बातों को छोड कर, केवल श्वास लेने से जो नमी जानवरों के फेफड़े से बाहर आती है, उसी से बहुत कुछ नमी वायु को पहुँचती है। शीतल वायु की अपेक्षा उष्ण वायु विशेष बाष्प को शोषण करता है। बहुत शीतल होने से वायु में नमी के शोषण की शक्ति मद तो हो जाती है, परन्तु नष्ट नहीं होती। यदि बर्फ़ का टुकडा ऐसे शीतल वायु में रक्खा जाय, जिसकी उष्णता ३२ ही दर्जे पर हो, जो कि सहनना‌ङ्क है तो थोडी देर में बर्फ का परिमाण घट जायगा, इससे यह प्रकट होता है, कि इतनी सर्दी में भी वायु से पानी के शोषण करने की शक्ति नष्ट नहीं होती। ३२ दर्जे की उष्णता में पानी बर्फ बन जाता है। ३२ दर्जे के ऊपर २१२ दर्जे के नीचे अपनी द्रव, स्थिति में रहता है। और २१२ दर्जे के ऊपर पहुँच कर गॅस का रूप धारण करता है। परन्तु वायु के साथ वह प्रत्येक दर्जे की उष्णता में अदृश्य रूप में स्थित रहता है। इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि वायु में उष्णता के परिमाण के अनुसार नमी के नियत परिमाण को शोषण करने की शक्ति है, जिस से विशेष नमी वायु में अदृश्य रूप में नहीं रह सकती। दूसरी तरह यों कहेंगे, कि यदि वायु में उष्णता न्यून होती है, तो थोडे बाष्प से तृप्त हो जाता है; यदि मध्यम दर्जे की

उष्णता होती है, तो वाष्प के मध्यम परिमाण से तृप्त हो जाता है, और यदि वायु में उष्णता विशेष है, तो अधिक वाष्प से तृप्त होता है। हम तृप्त उस वायु को कहते हैं, जिसमें इतना वाष्प उपस्थित हो, कि अल्पही विशेषता से वाष्प नेत्र से अदृश्य न रह सके।

७१—जब वायु में ६० दर्जे की उष्णता होती है, तो एक घन गज़ वायु दो माशे वाष्प से तृप्त होता है, अर्थात् दो माशे पानी एक घन गज़ वायु में, जब कि वायु की उष्णता ६० दर्जे हो, अदृश्य वाष्प के रूप में रह सकता है। यदि वाष्प का परिमाण इस से अधिक बढ़ेगा, वा वायु की उष्णता घटेगी, वाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न हो जायगा, और वाष्प पारदर्शक और अदृश्य नहीं रहेगा, किन्तु वायु में धूंधलापन पैदा हो जायगा। जब वायु में उष्णता ८० दर्जे की होती है, तो एक घन गज़ वायु चार माशे वाष्प से तृप्त होता है; अर्थात् ४ माशे पानी एक घन गज़ वायु में अदृश्य रूप से रह सकता है। इसी तरह समझ लेना चाहिए, कि जितनी वायु की उष्णता विशेष होती है, उतना ही विशेष वाष्प से वायु तृप्त होता है। इस से प्रकट है, कि किसी स्थान के वायु का तर होना केवल नमी के परिमाण पर अवलम्बित नहीं है किन्तु नमनाक उस वायु को कहते हैं, जिस में उष्णता के परिमाण से जितनी नमी होनी चाहिए उतनी उपस्थित हो। ऐसा हो सकता है, कि किसी स्थान के वायु में बहुत सी नमी उपस्थित हो, परन्तु

उष्णता की निष्पत्ति से न्यून हो तो ऐसा वायु नमनाक नहीं कहा जा सकता। इस के विपरीत, जब वायु में नमी न्यून हो, परन्तु उष्णता को निष्पत्ति से भर पूर हो, तो उस वायु को नमनाक कहेंगे। उदाहरणार्थ किसी स्थान के वायु की उष्णता ८० दर्जे है, और उसमें नमी घन गज़ पीछे दो माशे है, तो पूर्वोक्तस्थान का वायु नमनाक नहीं है, वरन शुष्क है। परन्तु दूसरे स्थान के वायु में भी नमी दो ही माशे प्रति घन गज़ है, परन्तु उष्णता ६० दर्जे से अधिक नहीं है, तो वहाँ का वायु नमनाक कहा जायगा।

७२—समुद्र का वायु प्रत्येक ऋतु में लग भग संतृप्त (Saturated) होता है। परन्तु पृथ्वी पर वायु का संतृप्त होना चंद बातों पर अवलम्बित है:—

(१) मिट्टी की स्थिति—अर्थात् मरुस्थल शुष्क होते हैं, और दूसरे प्रकार की भूमि की स्थिति भिन्न होती है;

(२) ऋतु—ऋतु का बड़ा प्रभाव वायु की शुष्कता और आर्द्रता पर पड़ता है;

(३) समुद्र से निकट अथवा दूर होना—जो स्थान समुद्र से निकट होते हैं वे नमनाक होते हैं, और जो दूर होते हैं वे विशेषतः शुष्क होते हैं;

(४) वायु की दिशा—यदि वायु समुद्र की ओर से आता है, तो शुष्क स्थलों पर भी नमी बढ़ जाती है, और यदि पृथ्वी की तरफ़ से आता है तो शुष्क होता है; जैसे हिन्दुस्थान

में उत्तर की तरफ़ पूर्व-वायु नमनाक, और पश्चिम-वायु शुष्क होता है, क्योंकि पहिला बङ्गाल की खाड़ी से, और दूसरा पृथ्वी की ओर से आता है।

हायग्रामेटर (Hygrometer)

७३—वायु की शुष्कता और आर्द्रता की ठीक जाँच हायग्रामेटर के द्वारा सुगमता से हो सकती है। हायग्रामेटर दो थर्मामेटर से मिल कर बना है, जो बराबर बराबर एक ही चौखट में लगे होते हैं; एक तो शुष्क होता है, और दूसरे के पास एक छोटा वर्तन होता है, जिसमें पानी होता है, और थर्मामेटर की गोली पर मलमल की खोली चढ़ी होती है। इस खोली में एक धागा लगा होता है, जो वर्तन के पानी में डूबा होता है। इस धागे के द्वारा पानी खोली तक पहुँचा करता है, जैसे बत्ती के द्वारा तेल दीपक की शिखा तक पहुचा करता है। इस प्रकार खोली सर्वदा आर्द्र रहती है। नियम यह है, कि जब पानी से बाष्प उठने लगता है, तो उसमें से उष्णता खिचने लगती है, अर्थात् जब पानी से बाष्प उठता है तब उसकी उष्णता में न्यूनता आने लगती है, इसलिए जितना शीघ्रतर आर्द्र मलमल से बाष्प उठता है, उतनी ही थर्मामेटर की गोली शीतल होती है। जब गोली शीतल हो जाती है तब नली का पारा नीचे उतर आता है। इन दोनों थर्मामेटर के अवलोकन से वायु की नमी की परीक्षा

हो जाती है । जब वायु शुष्क होता है, तो आर्द्र मलमल से वाष्प शीघ्रता से उठता है, जिससे थर्मामेटर का पारा नीचे उतर आता है; और शुष्क थर्मामेटर का पारा वायु की उष्णता के अनुसार ऊंचा रहता है, और दोनों में बड़ा भेद रहता है, जिससे यह प्रकट होता है, कि वायु में नमी बहुत न्यून है । जब वायु नमी से परिपूरित होता है, तो विशेष नमी को शोषण नहीं कर सकता, अतएव गीली की मलमल से वाष्प कम उठता है, और दोनो थर्मामेटर में पारा लगभग बराबर बराबर ही होता है, जिससे विदित होता है, कि वायु नमी से परिपूरित है । जब वायु अत्यन्त उष्ण और उष्णता की निष्पत्ति से तर भी होता है, तो थोड़ीसी उष्णता के घटने से वाष्प में गाढ़ीकरण (Condensation) प्रारंभ हो जाता है, और पारदर्शकता नहीं रहती । वही वाष्प जो प्रथम ऐसा पारदर्शक था, कि जिसको देखने को लोचन असमर्थ थे, इतना धुंधला हो जाता है कि दृष्टि उसके पार नहीं जा सकती। यदि वाष्प में धुँधलापन वायु के उस पट में उत्पन्न होता है, जो भूतल से लगा हुआ है तो उसको कोहरा कहते हैं; परन्तु यदि यह स्थिति वायु के उच्च पट में उत्पन्न होती है, तो उसको बादल कहते हैं । वास्तव में कोहरा और बादल एकही वस्तु है, केवल ऊँचा और नीचा होना इतना ही भेद है; मानो कोहरा उस बादल का नाम है, जो पृथ्वी के तल से मिला हुआ है, और बादल उस कोहरे

को कहते हैं जो गगनावलम्बि है। यदि ऊंचे पहाड़ पर बाष्प में गाढ़ापन पैदा होने से उसमें धुँधलापन आजाय, तो पहाड़ के लोगों को तो कोहरा मालूम होगा, और उसके आस पास के सम-भूमि-निवासियों को यह मालूम होगा कि बादल घिरा हुआ है। जिन लोगों को ऐसे पहाड़ों पर चढ़ने का अवसर आया है, जिन पर नीचे से ऐसा मालूम होता था कि बादल आच्छादित है, वे जब पहाड़ के उस स्थान पर पहुंचे जहाँ बादल पहाड़ से मिला मालूम होता था, तो क्या देखते हैं कि कोहरा छाया है, परन्तु इस कोहरे से होकर ऊपर गये, और लगभग १००० फ़ीट की उंचाई पर पहुंचे, तो फिर कोहरे ने बादल का रूप धारण किया। संक्षेपतः कोहरा उस समय तक ही कोहरा है, जब तक हम कोहरे में उपस्थित हैं, परन्तु जब हम कोहरे से दूर हैं, चाहे वह कोहरा हमारे मस्तक के ऊपर की ओर हो चाहे पाँव के नीचे की ओर, वही कोहरा बादल है। जो लोग ऐसे समय ग़ुब्बारे में बैठ कर चढ़े हैं, जब कि बादल आच्छादित था, उनका जब तक ग़ुब्बारा बादल के नीचे रहा, तब तक ऐसा नज़र आता था कि बादल आच्छादित है, परन्तु जब उनका बादल के मध्य में प्रवेश हुआ तो, मालूम हुआ कि कोहरा छाया है; जब ग़ुब्बारा बादल से पार हुआ, तो बादल के ऊपर प्रकाश फैला हुआ था, और बादल के ऊपर का तल आदर्श का काम देता था, अर्थात् ग़ुब्बारे का प्रतिबिंब

बादल में दिखाई देता था, जैसा आदर्श में दिखाई देता है ।

७४—कोहरा विशेषतः नदियों, समुद्रों, झीलों और नमनाक स्थानो में शीतकाल के आदि में हुआ करता है । हमारे हिन्दुस्तान में तराई (हिमालय) ही में कोहरा विशेष कर के हुआ करता है । दूसरे स्थान पर बहुत न्यून होता है । पहाड़ों पर विशेष तर अक्तूबर नवम्बर में कोहरा छाया करता है । फिर भी हमारे यहां का कोहरा विशेष वर्णनीय नहीं, क्योंकि यहाँ न तो कोहरे से कोई लाभ है, न कोई हानि, और न इस में कोई आश्चर्य-जनक बात है ।

७५—लन्दन (London) कोहरे के लिए विशेष कर के प्रसिद्ध है । वहां कभी कभी कई दिन तक दिन और रात में अन्तर मालूम नहीं होता, लोगों के काम काज बहुत कर के बंद हो जाते हैं, और मशाल अथवा लॅम्प का प्रकाश दो चार गज तक भी नहीं पहुँचता । पेरियल वर्ल्ड (Aerial world) ग्रन्थ का कर्ता लिखता है, कि सन् १८७३ के आठ दिसम्बर से लेकर १४ दिसम्बर तक इस बहुतायत से कोहरा लन्दन में छाया रहा, कि एक सप्ताह तक नदी पर नावों का चलना बिलकुल बँद रहा ; १२ दिसम्बर को दो पहर के समय यह अन्धकार कुछ न्यून हुआ, परन्तु केवल इतना कि कुछ गज़ों की दूरी पर वस्तुएं कुछ कुछ दीखने लगीं ; परन्तु सायङ्काल में पुनः अन्धकार बढ़ गया, यहां तक कि सड़क की लालटेनें

नज़र नहीं आती थीं। गाड़ियों का चलना बंद था, और दो एक गाड़ियाँ जो निकलीं तो जिनके साथ मशाल थी, फिर भी मार्ग दिखाई नहीं देता था। रेल के स्टेशनों पर बराबर आतिशबाज़ी के गोले इसलिए उड़ाये जाते थे, कि रेल के आने जाने से लोग सावधान हो जायँ, और कोई घटना नहीं होने पावे, और ब्यूगल बराबर बजते थे। बहुत से मनुष्यों ने इस गाढ़ अन्धकार में अपने प्राण खोये। ऐसा भयङ्कर कोहरा, जिस से इतनी बड़ी विशाल नगरी, एक सप्ताह तक ऐसे गाढ़ अन्धकार से आच्छादित रहे, कि रात को रात और दिन को दिन न जान सके, अन्धे और सूझते में कुछ अन्तर न रहे, जगत् के सब काम बंद हो जायँ, घर से बाहर पाँव देना अत्यन्त कठिन हो, और सर्वदा प्राणों के जाने की आशङ्का रहे, परम प्राणहारिणी आपदा है।

७६—लन्दन में कोहरे से इतना अन्धकार होने का कारण यह है, कि पश्चिम से उष्ण और बाष्प-मिश्रित वायु टापू में आता है, और वहाँ की सर्दी से वाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न होता है, एवम् असंख्य कार्यालयों और अगणित चिमनियों के धूम के संमेलन होने से, कोहरे का मामूली अन्धकार विशेष बढ़ जाता है।

७७—न्यूफाउण्ड लेण्ड (New Foundland) के किनारे पर सर्वदा कोहरा छाया रहता है, क्योंकि जो गल्फ स्ट्रीम (Gulf Stream) उस के निकट से जाता है, उस का पानी

उष्ण है । जब उस गल्फ स्ट्रीम से वाष्प-मिश्रित वायु न्यूफ़ाउण्ड लेण्ड पर पहुंचता है. तो वहाँ की सर्दी से वायु में कोहरा पैदा हो जाता है ।

७८—ऊँचे पहाड़ों पर बहुत कर के कोहरा छाया रहता है । आइस बर्ग (Ice-berg) के चैा तरफ़ भी कोहरा छाया रहता है । आइस बर्ग अर्थात् बर्फ़ के बड़े बड़े टीले पहाड़ों के समान होते हैं, जो ग्रीनलेण्ड (Greenland) की ओर से कभी कभी विलग होकर दक्षिण की तरफ़ बह कर आते हैं । नदियों पर न्यून वा अधिक कोहरा छाया रहता है । इस के दो कारण हैं, यदि नदी का जल उष्ण होता है, तो उस का तप्त और वाष्प मिश्रित वायु जब आस पास के शीतल वायु से मिलता है, तो उस की सर्दी के कारण पूर्वोक्त वाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न होने से कोहरा बन जाता है । और यदि नदी का पानी शीतल होता है, तो आस पास का उष्ण और वाष्प-मिश्रित वायु जब नदी की ओर आता है, तब उस की सर्दी से वाष्प में गाढ़ापन होने लगता है । संक्षेपतः नदी के ऊपर थोड़ा बहुत कोहरा अल्प धूम के समान सर्वदा उपस्थित रहता है । जंगली लोग इसी धूम को अवलोकन कर के दूर से शीघ्र ही जान लेते हैं, कि किस स्थान पर नदी बहन कर रही है । कोहरा बहुत कर के भूमितल से ले कर १००० वा १२०० फ़ीट तक ऊँचा होता है, इस से अधिक ऊँचा नहीं होता ।

—:०:—

बादल।

७९—बादल ऐसे आश्चर्य-जनक और अनेक रूप धारी होते हैं. कि देखने से ऐसा मालूम होता है, कि शास्त्रीय नियम से उन का वर्गीकरण करना अशक्य है। परन्तु मि० ल्यूक हावर्ड (Mr. Luke Howard) ने सन् १८०२ में इस ओर विशेष ध्यान दिया. और जिस रीति से वे दृष्टिगोचर होते हैं उसके अनुसार बादलों के ४ वर्ग नियत किये, वे ये हैं (१) सिर्रस (Cirrus), (२) कुमूलस (Cumulus), (३) स्ट्रेटस (Stratus), (४) निम्बस (Nimbus)।

सिर्रस बाल के लट को कहते हैं। ये बादल श्वेत ऊन से एक दूसरे के बराबर बराबर बहुत ही ऊंचे होते हैं, और बहुत कर के सफ़ेद पर या बालों के सदृश नज़र आते हैं। कभी कभी भूतल से १० मील की ऊँचाई पर होते हैं। बहुधा नीचे का वायु एक दिशा में चलता रहता है और ऊपर का दूसरी दिशा में, तब ये बादल उस वायु के विपरीत दशा में चलते हुए दिखाई देते हैं, जो भूमितल पर चलता रहता है। इन्हीं बादलों के लिए अनुमान किया जाता है, और वह (अनुमान) बहुत कुछ सत्य भी है, कि वे बर्फ़ के छोटे परमाणुओं के जम जानेसे बने हुए हैं। जब ये बादल हमारी पृथ्वी के और चंद्र या सूर्य के बीच में आ जाते हैं, तो चंद्र और सूर्य के परितः परिवेष दृष्टिगोचर होता है, जिसे कुण्डल कहते हैं।

कुमूलस का अर्थ ढेर है; जो बादल ढेर के रूप में दृष्टि-गोचर होते हैं उन को यह उपाधि दी गई है।

तीसरी जाति स्ट्रेटस है. जिसका अर्थ चादर है; ये बादल चादर के रूप में फैले होते हैं।

चौथी जाति निम्बस है, जिसका अर्थ मेह है, ये बादल कुछ स्लेट अथवा धूम के रंग के होते हैं, और उन के किनारे श्वेतता लिये होते हैं। बहुत कर के बरसते हुए बादल इस रूप में देखने में आते हैं। बहुधा कई जाति के बादल एक साथ होते हैं। ऐसी स्थिति में एक जाति के बादल को दूसरी से जानना अत्यन्त कठिन है।

८०–चिरकाल तक इस बात पर वादानुवाद होता रहा, कि बादल में पानी किस रूप से निवास करता है। पानी वायु से भारी है, फिर किस कारण से बहुत काल तक बादल के रूप से वायु में स्थित रहता है। बहुतों का यह मत था, कि पानी के कण गोल और खोखल होते हैं, और बारीक इतने होते हैं, कि प्रबल शक्ति वाले सूक्ष्म-दर्शक से भी नहीं देख सकते। खोखल और शून्य होने के कारण वे वायु से हलके होते हैं, इससे वायु में लटके रहते हैं। परन्तु अब यह मत माना नहीं जाता; विशेषतर मत अब यह प्रचलित है, कि यद्यपि बाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न होने से बादल बनता है, तो भी बादल की स्थिति में पानी के परमाणु इतने निविड़ नहीं हो जाते हैं, कि वायु से भारी हो जायँ। और जब पानी

के कण इकट्ठे होकर बूंद का रूप धारण करते हैं, तो वायु उन को संभाल नहीं सकता, जिस से बूंदे पृथ्वी पर गिरने लगतीं हैं, जिनको वर्षा कहते हैं। इसका प्रमाण स्टीम एंजन (Steam Engine) के निरीक्षण से मिल सकता है। यदि एंजिन ऐसे समय चलता हो, जब कि वायु शीतल हो, और अपन एंजन के उस तरफ़ खड़े हों जिधर वायु जाता है, तो जो वाष्प एंजिन के वेस्ट पाइप (Waste Pipe) से निकलता है, सर्दी के कारण उस की बूंदें बन कर मेह के समान बरसती हुई मालूम होंगी; परन्तु यदि वायु शीतल न होगा तो वाष्प को शोषण कर लेगा, और इसी रीति से वाष्प अदृश्य हो जायगा; केवल थोड़ी देर तक वाष्प का रूप वही होगा, जो कि बादल का होता है।

८९—जब नीचे से नमनाक और तप्त वायु ऊपर जाता है, तो ऊपर की सर्दी से वाष्प में गाढ़ापन पैदा होता है, इस से वाष्प बादल के रूप में दृष्टिगोचर होता है। यह गाढ़ापन ऊपर के विभाग में होता है, और नीचे का वाष्प-मिश्रित वायु ऊपर के बादल को सहारा दिये होता है; इस के पश्चात् इन तीनों बातों में से एक बात होती है—प्रथम यह कि वायु में नमी विशेष और गाढ़ापन भी पूर्ण होता है, तो पूर्वोक्त वाष्प बूंदें बन कर बरसने लगता है; यदि आस पास का वायु विशेष शुष्क होता है, और किसी तरह की रोक वायु में नहीं होती, तो बादल वायु के साथ उड़ते चले जाते

हैं, और शुष्क वायु में छिटक कर नष्ट हो जाते हैं, यदि वायु में नमी अधिक तर नहीं होती है, तो बादल विशेष शीतल होकर नीचे उतरने लगते हैं, और नीचे के उष्ण और शुष्क वायु से पुनः वह बाष्प कि जिससे वे बादल बने थे अदृश्य रूप को धारण करता है। यह बात बहुधा देखने में आती है, कि तीसरे प्रहर को बादल आच्छादित हो जाते हैं, परन्तु बिना बरसे ही रात को गगन-मण्डल निर्मल हो जाता है, इसका कारण यही है जैसा कि ऊपर वर्णन कर आये हैं, अर्थात् नीचे से ऊपर तक नमी वायु में इतनी नहीं होती कि, गाढ़ा बन कर मेह का रूप धारण करे; इसलिए बाष्प अर्थात् बादल नीचे उतरने लगते हैं, और नीचे की उष्णता और शुष्कता बादल को पुनः अदृश्य बाष्प के रूप में पलट देती है।

८२—जब बाष्प-पूरित वायु इतनी ऊंचाई तक पहुंचता है, कि यह बाष्प बादल बन जाय, तब वहाँ ठहर नहीं जाता, वरन जब तक वायु में बाष्प शेष रहता है; तब तक बराबर ऊपर चढ़ता है। इस का कारण हम थोड़ा स्पष्ट रीति से वर्णन करना चाहते हैं। जब पानी से बाष्प उठता है, तो पानी की उष्णता न्यून हो जाती है। ग्रीष्म काल में ऐसे समय, जब कि वायु बहुत तप्त और शुष्क हो, पीतल, ताँबे आदि के बर्तन में पानी भर कर ऊपर से आर्द्र कपड़ा लपेट दिया जाय, तो आर्द्र कपड़े से बाष्प उठने के कारण, कपड़ा और

बर्तन दोनों शीतल हो जायँगे; इस रीति से बर्तन का पानी भी शीतल हो जायगा। मिट्टी के भरने वाले बर्तनों में इसी कारण से पानी शीतल हो आया करता है, अर्थात् ज्यों ज्यों पानी भर भर कर बाहर आता है, त्यों त्यों उष्ण और शुष्क वायु से वाष्प बनकर उड़ता जाता है, और बर्तन ठंढा होता जाता है। इस संसार की कोई वस्तु नष्ट नहीं होती है। हम को देखना चाहिए कि पानी से उष्णता निकल कर किधर गई? इस उष्णता को उसी वाष्प ने शोषण कर लिया, जो पानी से उठा था (मानो धरोहर के तौर पर उस में रक्खी है)। जब वाष्प से बादल बनते हैं, तब उस वाष्प से उष्णता निकल कर वायु में फैल जाती है, इसलिए इस उष्णता के प्रसरण से वायु भी फैलने लगता है, और फैलने से हलका होकर वह वाष्प को लेकर ऊपर चढ़ता है। इस रीति से जब तक वाष्प वायु में उपस्थित रहता है, वायु बराबर ऊपर चढ़ता जाता है। बादल जितना जितना ऊपर चढ़ता है, उतना ही उस का घनफल (Volume) कम होता जाता है। बहुधा ऐसा देखने में आया है, कि पहाड़ से तो बादल लिपटा हुआ है, परन्तु आस पास के मैदान पर आकाश अत्यन्त स्वच्छ है; इस का कारण यह है, कि उष्ण और वाष्प मिश्रित वायु पहाड़ से टक्कर खाकर सीधा ऊपर उठता है, और ऊपर फैल कर शीतल हो जाता है, इसी कारण जो वाष्प उस में स्थित होता है, उस से शीघ्र ही

बादल बन जाते हैं। किसी किसी पहाड़ पर बहुत आश्चर्य-जनक दृश्य देखने में आता है, कि एक ओर से तो उष्ण और वाष्प-मिश्रित वायु पहाड़ पर आता है. और वहाँ की सर्दी से उसके बादल बनते हैं; ये बादल पहाड़ की दूसरी ओर जाते हैं, तो वहाँ के शुष्क वायु में नमी वाष्प बन कर छिटक जाती है, और वे (बादल) नष्ट हो जाते हैं। केप आफ़ गुड होप (Cape of Good Hope) का टेबल माउन्टेन (Table Mountain) इस दृश्य के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ उत्तर गोलार्ध के विपरीत सेप्टेम्बर से मार्च तक उष्ण काल होता है। इस काल में आग्नेय कोण का वायु हिन्द महासागर के वाष्प से परिपूरित उस ओर आता है, और वहाँ ऊपर की सर्दी से पूर्वोक्त वाष्प बादल का रूप धारण करता है। पुनः वायु इस बादल को पूर्वोक्त पहाड़ के सपाट शिखर पर उड़ा ले जाता है। जब यह बादल वहाँ से होकर दूसरी ओर जाता है, तो वहाँ के उष्ण और शुष्क वायु से अदृश्य वाष्प का रूप धारण करता है। और बराबर यह स्थिति जारी रहती है, कि एक ओर से बादल बनते हैं और दूसरी ओर टूट फूट कर मिट जाते हैं।

८३—बादल की ऊँचाई के विषय में कोई मत स्थिर नहीं हो सकता, अर्थात् यह बात दृढ़तापूर्वक कही नहीं जा सकती, कि किस जाति के बादल की ऊँचाई कितनी होती है। बादल ४००० फ़ीट से न्यून ऊंचे नहीं होते हैं। उष्ण

काल में वादल का ऊँचाई अधिक और गति मन्द होती है, क्योंकि उष्णकाल में वाष्प में गाढ़ापन वहुत ऊँचाई पर उत्पन्न होता है, परन्तु शीतकाल में ऊँचाई न्यून और गति शीघ्र होती है।

८४—जिन लोगों ने गुब्बारे में बैठ कर व्योम-विहरण किया है, उन लोगों से वहुत सी आश्चर्य-जनक वातें वादलों की ऊँचाई के विषय में सुनने में आई हैं। पेरिस (France) के वेध-गृह (Observatory) से जो मनुष्य जुलाई सन् १८५० ईस्वी में उड़े थे, उनके गुब्बारे ने ८००० फ़ीट की ऊँचाई पर पहुँच कर वादल में प्रवेश किया था; इस वादल की मोटाई १५००० फ़ीट की थी। इस के वाहर जाने न पाये थे, कि गुब्बारा फट गया और नीचे उतरने लगा। मिस्टर ग्लेशर (Mr. Glaisher) के व्योम-विहरण से अत्यन्त मनोरञ्जक वातें वादल के विषय में मालूम हुई हैं। २६ जून सन १८६२ ईस्वी को मिस्टर ग्लेशर और मिस्टर कास्सवेल (Mr. Coxwell) गुब्बारे में उड़े, उस समय वादल आच्छादित था, और प्रचण्ड वायु चल रहा था। एक वजे दिन को गुब्बारा पृथ्वी से उड़ा, उस समय थर्मामेटर ६५ डिग्री पर था। ४००० फ़ीट की ऊँचाई पर पहुँचने के पश्चात गुब्बारे ने वादल में प्रवेश किया, यहाँ थर्मामेटर उतर कर ५० दर्जे पर आ गया। इस वादल के पार होने के पश्चात् स्वच्छ आकाश दिखाई नहीं दिया; एक वादल से वाहर हुए तो दूसरा

बादल ऊपर की ओर आच्छादित था। इस प्रकार से ९००० फ़ीट की ऊँचाई तै की। जब वहाँ से ऊपर गुब्बारा चला, तो कहीं पानी बरसता था और कहीं कोहरा आच्छादित था। इस प्रकार तीन मील और ऊपर गये, जहाँ पहुँच कर क्या देखते हैं, कि गुब्बारे से थोडी दूर पर चारों ओर बादल घिरा हुआ था; और ऊपर दृष्टि डाली, तो ऊपर भी बादल आच्छादित दिखलाई दिया। चढ़ते चढ़ते चार मील की ऊँचाई तक पहुँचे, तो वहाँ भी ऊपर बादल था, जिस की मोटाई दो वा तीन हजार फ़ीट से न्यून न होगी। यह बादल सिर्रस जाति का न था, परन्तु निम्बस जाति का अर्थात् बरसने वाला था, जो सब बादलों से नीचा होता है। यहाँ से गुब्बारे ने कोहरे में प्रवेश किया, और एक हजार फ़ीट की ऊँचाई कोहरे में काटी। संक्षेपतः २३,००० फ़ीट की ऊँचाई पर पहुँचने के पश्चात् भी ऊपर बादल घिरा हुआ पाया। उतरते समय जब ऐसे स्थान पर पहुँचे, जहाँ से पृथ्वी-तल तक तीन मील का अन्तर था, (अर्थात् वह स्थान पृथ्वी से तीन मील ऊँचा था) गुब्बारे पर पानी बरसने लगा। जब उतर कर ऐसे स्थान पर आये, जो पृथ्वी-तल से १४,००० फ़ीट ऊँचा था, तब बर्फ़ पड़ने लगी, और बर्फ़ के फूल कपड़ों पर बराबर दृष्टिगोचर होते थे; पाँच हज़ार फ़ीट की ऊँचाई तक यही स्थिति रही।

——:०:——

आठवाँ अध्याय।

८५—अब तक हम ने पानी के वे रूप वर्णन किये, कि जिन में पानी वायु से मिश्रित होता है। एक रूप यह था कि पानी पारदर्शक अदृश्य स्वरूप में वायु के साथ ऐसा घुला मिला रहता है, कि देखने में नहीं आ सकता। दूसरा रूप यह था कि पानी वायु से अलग तो नहीं होता, परन्तु गाढ़ा बन कर धुंधला बाष्प बन जाता है, और ऊँचाई या निचाई के कारण से बादल या कोहरा के नाम से कहा जाता है। अब हम पानी के उन रूपों का वर्णन करते हैं, जिन में पानी वायु से पृथक् होकर अनेक रूप धारण करता है, अर्थात् ओस, मेह, बर्फ़ और ओला।

ओस।

८६—ऐसी प्रसिद्ध बात को कौन नहीं जानता होगा, कि पानी की बूंदें जो प्रातःकाल के समय मोती के समान बनस्पति पर बिखरी हुई होती हैं, इन्हीं को ओस कहते हैं। परन्तु इस प्रश्न ने चिरकाल तक बड़े बड़े बुद्धिमानों को उलझन में डाल रक्खा था, कि ये बूंदें क्योंकर पैदा होती हैं? और कहाँ से आती हैं? ओस के उस समय गिरने के कारण, जब कि आकाश बादलों से स्वच्छ होता है, लोगों ने यह अनुमान

करना आरंभ कर दिया था, कि ओस सितारों से बरसती है। डाकृर वेल्स (Dr Wells) पहिला व्यक्ति था, जिसने ओस के सम्बन्ध में ठीक ठीक अन्वेषण किया, और सन् १८१२ ईसवी में इस विषय में एक लेख लिखा, जो संक्षेपतः यहाँ लिखा जाता है।

"जब आकाश बादल और धूल आदि से स्वच्छ होता है, तो सूर्य के अस्ताचल जाने के पश्चात् वनस्पति और भूतल की दूसरी वस्तुओं से वह उष्णता जो कि इन्होंने शोषण की है, निकलने लगती है; यहाँ तक कि उनके ऊपरी भाग धीरे धीरे शीतल हो जाते हैं। रात्रि को उस वायु की उष्णता घटने लगती है, जो उन वनस्पति और वस्तुओं से मिली होती है। वायु में वाष्प तो सर्वदा थोड़ा या बहुत रहता है। जब वायु शीतल होते होते उस स्थिति को पहुँचता है, जिसे हम जल से संपृक्त होना कहते हैं, और जब उन वनस्पति या वस्तुओं पर से जाता है जो कि इससे अधिक तर शीतल होती हैं, तब उस (वायु) के वाष्प में गाढ़ापन होने लगता है, और वह (वायु) उसको इस स्थिति में संभाल नहीं सकता। इस कारण गाढ़े वाष्प को पानी की बूँदों के स्वरूप में उन वनस्पति या वस्तुओं पर छोड़ जाता है और इन्हीं बूँदों को ओस कहते हैं।"

८७—इस बात का प्रमाण कि वायु किसी समय पानी के वाष्प से रिक्त नहीं रहता, और इस बात का कि जब वायु

बहुत शीतल वस्तु के ऊपर होकर जाता है तो उसका वाष्प गाढा बन कर पानी की बूंदों में परिवर्तित हो जाता है, अत्यन्त सुगम प्रयोग से मिल जाता है। एक स्वच्छ गिलास लो, और उस को वर्फ से शीतल किये हुए पानी से भरो. थोड़ी देर में गिलास की चमक मंद हो जायगी, और थोड़ी ही देर में यह धुँधलापन बढ़ते बढ़ते पानी की बूंदों में परिवर्तित हो जायगा; पानी गिलास में से भर कर बाहर नहीं आया; परन्तु वायु में जो अदृश्य और पारदर्शक वाष्प था, वही शीतल गिलास से लग कर पानी की बूंदो में परिवर्तित हो गया। डाकृर वेल्स ने जो संशोधन किया उससे यह प्रकट होता है, कि उक्त डाकृर की यह सम्मति थी कि केवल वही वाष्प गाढा बन कर ओस हो जाता है, जो कि वायु में स्थित है. परन्तु आधुनिक काल के विज्ञानियो ने जो संशोधन किये हैं, उनसे व्यक्त होता है, कि केवल वायु का वाष्प ही ओस का कारणभूत नहीं होता, परन्तु वह नमी भी जो कि पृथ्वी के भीतर से निकलती है, और वह नमी जो कि पसीने के समान वनस्पति से निकला करती है, ये सब वायु के वाष्प से संमिश्र होकर ओस बनती है।

८८—ओस सब से अधिक उष्ण कटिबन्ध में गिरती है, विशेष करके उन स्थानों पर, जो कि नमनाक होते हैं। आश्विन, कार्तिक, फाल्गुन और चैत्र में ओस अधिकतर गिरती है, कारण इसका यह है, कि दिन भर तो धूप तीव्र

गिरती है, जिससे प्रत्येक वस्तु से वाष्प विशेष उठती है, फिर सूर्य के अस्त हो जाने के पश्चात् वायु शीघ्र ही शीतल हो जाता है, इसलिए उन दिनों में वायु प्रत्येक रात्रि को पूर्ण तृप्त होता है। दिन भर की धूप से मुरझाये हुए वनस्पति रात्रि की ओस से लहलहा उठते हैं। ओस ही केवल ऐसी वस्तु है जिससे किसी को किसी प्रकार की हानि नहीं, न पशुओं को न वनस्पति को। जो लोग कहते हैं कि मनुष्य के स्वास्थ्य में ओस से क्षति पहुँचती है, उनका यह कहना सत्य नहीं; क्योंकि जिस समय में ओस अधिक गिरती है, उन दिनों रात्रि और दिवस की उष्णता में बहुत बड़ा अन्तर होता है। जो मनुष्य इस फ़र्क से बचाव नहीं कर सकते और दिन भर के परिश्रम के पश्चात् रात भर की शीतलता से विश्रान्ति लेना चाहते हैं, और बाहर सो रहते हैं, उन्हीं का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, इस में ओस का क्या दोष है?

८

८९—जब वायु की उष्णता घट कर ३२ दर्जे से कम रह जाती है, तब ओस न गिरते पाला पड़ने लगता है, जिस से कोमल वनस्पति को बहुत हानि पहुंचती है। जब कभा उतरते माघ में अत्यन्त सर्दी पड़ने लगती है, तो कृषिकारों को यह भय होता है, कि कहीं चने और अफ़ीम को पाला न मार जाय।

वर्षा ।

९०—वायु की उदारता से जो जो लाभ होते हैं, उन में सब से बढकर वर्षा है। यद्यपि कभी कभी वर्षा से बहुत हानि भी पहुँचती है, नदियों में पूर आता है, जिससे आस पास के गांव उजड जाते हैं, खेतो की उपजाऊ शक्ति विशेष वृष्टि के कारण मृत्तिका व खात बह जाने से न्यून हो जाती हे, गृह गिर पडते हैं, और नमी की बहुतायत से बीमारियां फैलती हैं, जिन से बहुत प्राणधारियों के प्राण नष्ट होते हैं। यह सब कुछ है, परन्तु जो सोन्दर्य और रमणीयता पृथ्वी को और जो वित्त और वेभव मनुष्य को, वर्षा के द्वारा प्राप्त होते हैं, उनके सामने यह हानि सर्वथा अगणनीय है। बाष्प के गाढापन की प्रथम स्थिति तो हम वर्णन कर चुके, कोहरा हो या बादल। इसी गाढापन की दूसरी स्थिति वर्षा है। कोहरे और बादल की स्थिति में पानी का बाष्प गाढा हो कर छोटी छोटी बूंदें बन जाता है; और ऊपर की सर्दी के कारण जब गाढापन में वृद्धि होती है तब छोटी छोटी बूंदें मिल जुल कर बडी बूंदें हो जाती हैं; जब इन बूंदों का बोझ अधिक हो जाता है तब गगनावलम्बी नहीं रह सकतीं, और वृष्टि होने लगती है। जब कि उतने वायु का पटल, जिस में से वृष्टि होती है सर्दी से सिमटने और वाष्प के गाढा होने के कारण घटने लगता हे तब चारों ओर से वायु, साम्य

रखने के लिए, उस तरफ़ आने लगता है। जब ये आने वाली हवाएं भी नमी से पूर्ण होती हैं तब वृष्टि में वृद्धि होने लगती है; और यदि इन हवाओं में नमी न्यन होती है, तो इन के आने से वृष्टि में न्यूनता आजाती है। यही कारण है कि बूँदें गिरना प्रारंभ होने के समय कभी तो तीव्र वायु के चलने के कारण वृष्टि अधिक होने लगती है, तथा बादल घिर आता है; और कभी इस के विपरीत बादल बिखर जाता है, और वृष्टि होना बन्द हो जाता है।

बहुधा ऐसा होता है, कि बादल घिर कर आता है, जो निम्बस जाति का अर्थात् बरसने वाला होता है, और ऊपर की ओर धुआंसा दृष्टिगोचर होता है, कि मानो वह बरसना चाहता है, परन्तु बरसता नहीं। यह बात उससमय होती है, जब नीचे का वायु शुष्क होता है, और बरसने वाला बादल ऊंचा होता है। ऐसी स्थिति में बादल तो वास्तव में बरसता है, परन्तु पानी पृथ्वी तक नहीं पहुंचता, बीचही में बूंदें शुष्क वायु में बाष्प बन जाती हैं। पाठकों ने बहुधा देखा होगा, कि आकाश पर इन्द्रधनुष है, परन्तु वृष्टि नहीं होती। यह तो सर्व विदित है, कि इन्द्रधनुष का कारण बूंदें हैं, बूंदों के सिवाय इन्द्रधनुष नहीं बन सकता। इस का कारण यही है, कि बूंदें पृथ्वी तक नहीं पहुंचतीं, बीचही में बाष्प बनकर अदृश्य हो जाती हैं, परन्तु नीचे की ओर इतनी दूर तक आती हैं, कि सूर्य की किरणें उन में से पार होकर इन्द्रधनुष बना सकें। बूंदें जब

बादल से विलग होती हैं, उस समय छोटी छोटी होती हैं, परन्तु पृथ्वी तक पहुँचते पहुंचते, वायु के वाष्प से मिल जुल कर, बड़ी हो जाती हैं। यही कारण है, कि पहाड़ पर फुंवार होती हैं, और उस समय तलेटी में मूसलाधर वृष्टि होती है। पॅरिस के वेधालय में कितने ही वर्षों की निरीक्षा के पश्चात् ज्ञात हुआ है, कि वेधालय की छत पर जितनी वृष्टि होती है, उसी समय में उसके आंगन में नौ गुणी वृष्टि होती है।

९१—शीतल देशों की अपेक्षा उष्ण देशों में मेघ की बूंदें बड़ी बड़ी होती हैं, भूमध्य रेखा के आस पास तो मेह की बूंद इन्च भर की होती है। कारण इस का यह है, कि उष्ण देश में बरसने वाला बादल ऊंचा होता है; बादल से पृथ्वी तक पहुंचते पहुंचते वायु के वाष्प के साथ मिलने से बूंदें बड़ी हो जाती हैं। एक ही देश में शीत काल में बूंदें छोटी, और उष्णकाल में बड़ी होती हैं। क्योंकि उष्ण काल में वाष्प में गाढापन बहुत ऊँचाई पर पैदा होता हैं, और शीत काल में थोड़ी ऊँचाई पर। बादल जितना ऊंचा होता है उतनी बूं बड़ी होती है।

९२—वर्षा के बहुत से कारण हैं, पहिला यह है, कि से मिला हुआ और उष्ण वायु सीधा ऊपर को जाता है; शीतता से वाष्प गाढ़ा बनकर बादल का स्वरूप है, यदि ऊपर से नीचे तक वायु संपृक्त होता है, तो ऊंचे होकर बादल बरसने लगते हैं। यह स्थिति जैसा

रखने के लिए, उस तरफ़ आने लगता है। जब ये आने वाली हवाएं भी नमी से पूर्ण होती हैं तब वृष्टि में वृद्धि होने लगती है; और यदि इन हवाओं में नमी न्यून होती है, ते। इन के आने से वृष्टि में न्यूनता आजाती है। यही कारण है कि बूंदें गिरना प्रारंभ होने के समय कभी ते। तीव्र वायु के चलने के कारण वृष्टि अधिक होने लगती है, तथा बादल घिर आता है; और कभी इस के विपरीत बादल बिखर जाता है, और वृष्टि होना बन्द हो जाता है।

बहुधा ऐसा होता है, कि बादल घिर कर आता है, जो निम्बस जाति का अर्थात् बरसने वाला होता है, और ऊपर की ओर धुआंसा दृष्टिगोचर होता है, कि माने। वह बरसना चाहता है, परन्तु बरसता नहीं। यह बात उससमय होती है, जब नीचे का वायु शुष्क होता है, और बरसने वाला बादल ऊंचा होता है। ऐसी स्थिति में बादल ते। वास्तव में बरसता है, परन्तु पानी पृथ्वी तक नहीं पहुंचता, बीचही में बूंदें शुष्क वायु में बाष्प बन जाती हैं। पाठकों ने बहुधा देखा होगा, कि आकाश पर इन्द्रधनुष है, परन्तु वृष्टि नहीं होती। यह ते। सर्व विदित है, कि इन्द्रधनुष का कारण बूंदें हैं, बूंदों के सिवाय इन्द्रधनुष नहीं बन सकता। इस का कारण यही है, कि बूंदें पृथ्वी तक नहीं पहुंचतीं, बीचही में बाष्प बनकर अदृश्य हो जाती हैं, परन्तु नीचे की ओर इतनी दूर तक आती हैं, कि सूर्य की किरणें उन में से पार होकर इन्द्रधनुष बना सकें। बूंदें जब

बादल से विलग होती हैं, उस समय छोटी छोटी होती हैं, परन्तु पृथ्वी तक पहुँचते पहुँचते, वायु के बाष्प से मिल जुल कर, बड़ी हो जाती हैं। यही कारण है, कि पहाड़ पर फुंवार होती हैं, और उस समय तलेटी में मूसलाधर वृष्टि होती है। पॅरिस के वेधालय में कितने ही वर्षों को निरीक्षा के पश्चात् ज्ञात हुआ है, कि वेधालय की छत पर जितनी वृष्टि होती है, उसी समय में उसके आगन में नौ गुणी वृष्टि होती है।

९१—शीतल देशों की अपेक्षा उष्ण देशों में मेघ की बूंदें बडी बड़ी होती हैं, भूमध्य रेखा के आस पास तो मेह की बूंद इञ्च भर की होती है। कारण इस का यह है कि उष्ण देश में बरसने वाला बादल ऊंचा होता है, बादल से पृथ्वी तक पहुंचते पहुंचते वायु के बाष्प के साथ मिलने से बूंदें बड़ी हो जाती हैं। एक ही देश में शीत काल में बूंदें छोटी, और उष्णकाल में बडी होती हैं। क्योंकि उष्ण काल में बाष्प में गाढापन बहुत ऊँचाई पर पैदा होता है, और शीत काल में थोड़ी ऊँचाई पर। बादल जितना ऊंचा होता है उतनी बूंद बड़ी होती है।

९२—वर्षा के बहुत से कारण हैं, पहिला यह है, कि बाष्प से मिला हुआ और उष्ण वायु सीधा ऊपर को जाता है; ऊपर शीतता से बाष्प गाढ़ा बनकर बादल का स्वरूप धारण करता है, यदि ऊपर से नीचे तक वायु सपृक्त होता है, तो थोड़े और ऊंचे होकर बादल बरसने लगते हैं। यह स्थिति जैसा कि हम

ऊपर वर्णन कर आये हैं, उन स्थानों पर सर्वदा दृष्टिगोचर होती है, जो भूमध्य रेखा पर स्थित हैं। दूसरा कारण यह है, कि वाष्प-पूरित और उष्ण वायु भूमध्य रेखा से उत्तर और दक्षिण की ओर बढ़ता है, और आगे बढ़ने और ऊंचे चढ़ने के कारण, उसके वाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न होता है, जिस से वादल बनते हैं; और वृष्टि होने लगती है। यह स्थिति भूमध्यरेखा के दोनों ओर २० अक्षांश तक देखने में आती है। इन दोनों सीमाओं के मध्य कोई कोई स्थानों पर, वर्ष में दो बार, वर्षा काल आता है; कोई कोई स्थानों में छः मास तक वर्षा काल रहता है, और कोई २ में केवल तीन मास तक। वर्ष भर में दो बार वर्षा काल उन स्थानों में आता है, जो भूमध्य रेखा से इतनी दूर पर स्थित हैं, कि जब वर्षा का कटिबन्ध उत्तर या दक्षिण की ओर बढ़ता है तब जाते समय उन पर से होकर जाता है, और लोटते समय फिर आता है। छः मास का वर्षाकाल उन जगहों पर होता है, जहां से आगे बढ़ने की हालत में, वर्षा का कटिबन्ध आगे निकल नहीं जाता; परन्तु आगे बढ़ने और लोटने दोनों स्थितियों में उन्ही स्थानों पर रहता है। सीमा के अन्त पै तीन मास या इस से कुछ न्यून काल तक वृष्टि होती है। आधे हिन्दुस्थान में तो वर्षा डोलड्रम के आने से होती है; और ऊपर के विभाग में मोसमी हवाओं के कारण वर्षा होती है। तीसरी स्थिति यह है, कि समुद्र की ओर से उष्ण और वाष्प

से परिपूरित वायु पृथ्वी की तरफ़ जाता है, यहाँ शीतल वायु के झोंके उसमें मिलते हैं; इनके गड़बड़ होने से बादल बनते हैं। यह स्थिति समशीतोष्ण कटिबन्ध में होती है। तूफान भी वर्षा के कारणभूत होते हैं; समशीतोष्ण कटिबन्ध में बहुधा छोटे छोटे तूफानों के आने से वर्षा हुआ करती है।

९३—जो स्थान ऐसी जगह पर स्थित हैं, जहां पर वाष्प से संपृक्त वायु पहुँच तो जाता है, परन्तु ऊंचे पहाड़ उसको आगे बढ़ने से रोकते हैं, वहाँ वर्षा बहुतायत से होती है। चेरापुंजी में जो हिमालय के पूर्व कोण पर स्थित है, पृथ्वी भर में सब से अधिक वृष्टि होती है, अर्थात् वर्षा भर में ५०० इञ्च तक। बङ्गाल की खाड़ी से जो वाष्पमिश्रित और उष्ण वायु उधर जाता है, उसको चार सहस्र फ़ीट का ऊंचा पहाड़ आगे बढ़ने से रोकता है, जिससे वह तर वायु इस पहाड़ से टकरा कर सीधा उठती है, और शीघ्र ही शीतल हो जाता है, जिससे बादल जल्द जल्द बनते हैं, और बरसने लगते हैं। यह स्थिति पश्चिमी घाट की भी है, यहा पर भी महाबलेश्वर में प्रतिवर्ष २५० इञ्च वर्षा होती है। यद्यपि उसी पहाड़ के पूर्व की ओर जो दक्षिण का सपाट मैदान है, वहाँ वर्षा बहुत न्यून होती है। सारांश यह है, कि उष्ण कटिबन्ध के उन स्थानों पर वर्षा अधिक होती है, जो इस तौर पर स्थित हैं, कि जहां समुद्र से उष्ण और वाष्प

मिश्रित वायु अच्छी तरह पहुँच सके, परन्तु आगे न जा सके।

९४—जो दृश्य ठंढे देशों में वसन्त में देखने में आता है, वही दृश्य उष्ण देशों में जहां वर्षा काल प्रवृत्त होता है, उन दिनों अर्थात् पावस के आगम से दिखाई देता है। शीतल देशों में शीतकाल की प्रचण्ड शीत पड़ने के पश्चात् जब ऐसा काल आता है कि शीतोष्ण समान होता है, तब वायु मनोहर और भला मालूम होने लगता है, वृक्षों में कोमल किसलय निकल कर वे, पुनः सब हरित और पल्लवित हो जाते हैं, और चारों ओर पुष्प प्रफुल्लित होने से पृथ्वीतल मकरन्द से परिपूरित हो जाता है। इसी प्रकार जेष्ठ वैशाख की प्रचण्ड उष्णता के पश्चात् जब आषाढ़, श्रावण मास आते हैं तब अत्यन्त श्याम मनोहर घटाएं उमड़ घुमड़ कर उठती हैं, शीतल पवन चलने लगता है, थोड़ी ही वृष्टि से सब भूमि हरित हो जाती है, और जहाँ कुछ दिनों के पूर्व शुष्क भयङ्कर मैदान दीख पड़ते थे, वहाँ हरियाई अत्यन्त मनोरंजक दृश्य दिखाती है, जिससे चित्त बहुत प्रसन्न होता है। वास्तव में हमारे देश में पावस ही वसन्त है।

हिम-वृष्टि।

९५—हमारे हिन्दुस्थान में वर्फ़ कभी नहीं गिरती, क्योंकि यहां पर इतनी सर्दी ही नहीं होती, परन्तु शीतल देशों में
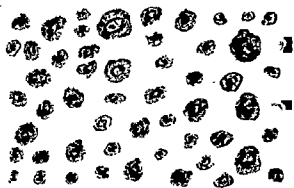
शीतकाल में कभी कभी मेह के स्थानापन्न बर्फ़ बरसती है । जब वाष्प से परिपूरित वायु से ऐसा वायु मिलता है, जो बहुत ही शीतल होता है, और दोनों के मेल से उष्णता ३२ दर्जे के नीचे रहती है, तो बादलों से बर्फ़ बरसती है । अत्यन्त आश्चर्यजनक बात यह है, कि बर्फ़ की बूंदें बेडौल नहीं होतीं, किन्तु बहुत ही सुन्दर पुष्पों के आकार में होती हैं । इन पुष्पों के अगणित रूप होते हैं, जो सब के सब अत्यन्त सुडौल हैं । प्रत्येक पुष्प में ६ दल होते हैं, और हरेक दल के कोण एक समान होते हैं, प्रत्येक कोण ६० डिग्री का होता है । सब से अधिक आश्चर्य-जनक बात यह है, कि यद्यपि बर्फ़ के पुष्प अगणित रूप के होते हैं, तो भी एक काल में समान रूप के पुष्पों की वृष्टि होती है; एक ही समय भिन्न स्वरूप के पुष्प कभी नहीं बरसते । एक सहस्र से अधिक रूपों के पुष्पों की गिनती हो चुकी है। प्रत्येक रूप के पुष्प समभुज होते हैं, और प्रत्येक के दल और उनके बीच के कोण इतने सुडौल होते हैं, कि मनुष्य की कारीगरी उनकी बराबरी नहीं कर सकती ।

९६—हम इन पृष्ठों में जहाँ तहाँ वर्णन कर आये हैं, कि उष्णता से वस्तु का वजन न्यून, और सर्दी से अधिक हो जाता है । चाहिए था कि पानी भी इस नियम का मानने वाला होता, और वास्तव में गॅसिअस स्थिति से प्रवाहिक स्थिति तक तो इसी नियम के अनुसार चलता भी है, अर्थात्

बाष्प की स्थिति में तो पानी वायु से भी हलका हो जाता है, परन्तु ज्यों ज्यों बाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न होता जाता है, त्यों त्यों उसका वजन बढ़ता जाता है। जब पानी की उष्णता घटते घटते ३९ दर्जे तक पहुँचती है तब विपरीत स्थिति पैदा होती है, अर्थात् पानी का परिमाण बढ़ने और वज़न घटने लगता है, यहाँ तक कि जब बर्फ़ के रूप में जम जाता है तब भारी न होकर हलका हो जाता है। उस समय वज़न के विषय में बराबर परिमाण के पानी और बर्फ़ में वही निष्पत्ति है, जोकि १००० और ९१६ में है। अर्थात् पानी का वज़न यदि १००० सेर है तो उसी परिमाण के बर्फ़ का बोझ ९१६ सेर होगा। लगभग १० और ९ की निष्पत्ति है। यही कारण है, कि जब बर्फ़ का टुकड़ा पानी में डालते हैं, तो नीचे नहीं बैठता, किन्तु तैरता रहता है, और वह भी इस प्रकार से कि लग भग दसवां भाग पानी के बाहर रहता है। पानी से बर्फ़ के हलका होने का कारण यह है, कि पानी जब जम जाता है, तो उस के परमाणु छोटे छोटे बिल्लोरी फूल बनकर एक दूसरे से मिल जाते हैं, परन्तु उन के बीच में अन्तर रह जाता है। प्रोफ़ेसर टिण्डल (Prof. Tyndall) ने अत्यन्त ही मनोरंजक प्रयोग से पूर्वोक्त वर्णन को सिद्ध किया है। उन्हों ने एक बर्फ़ का टुकड़ा लिया, और किसी रीति से उसके बीचोबीच विशेष उष्णता पहुँचाई जिससे भीतर से बर्फ़ पिघल गई;

फिर सूक्ष्म दर्शकयंत्र से लोगों को दिखला दिया, कि गली हुई बर्फ़ में बिल्लोरी फूल स्थित हैं।

ओला।

९७—वायु से विलग होकर जितने रूप पानी धारण करता है, उन सब से बुरा और हानि-कारक ओला है, जिस से न जानवरों को कुछ लाभ होता है, न वनस्पति को, किन्तु दोनों के वास्ते ओले का बरसना बड़ा ही हानिकारक है, और उसको रोकने का कोई उपाय नहीं है। जहां कहीं ओले का बादल बरस जाता है वहां खेत और बाग़ उजड़ जाते हैं। यद्यपि इस अचानक आपत्ति के लिए कोई ख़ास समय नियत नहीं है, परन्तु हमारे देश में ओले बहुधा वसन्त में गिरा करते हैं, जब कि फ़स्लें-रबी तय्यारी पर होती है, और आम के वृक्षों में मौर आ जाते हैं। दोनों का ओले की एकही वर्षा से ऐसा नाश होता है, कि जिसका उपाय मनुष्य की शक्ति से बाहर है। यह बात विशेष आश्चर्यजनक है, कि बर्फ़ उष्ण देशों में कभी नहीं बरसती, परन्तु ओले सर्द मुल्कों में भी गिरते हैं, और उष्ण देशों में भी, यद्यपि ओले के रूप में पानी के जमने के लिए बहुत सर्दी की आवश्यकता है। आज तक इस बात का पूरा पता नहीं लगा, कि ओले के जमने का मुख्य कारण

क्या है। ओले के बादल के साथ कड़क और बिजली की चमक बहुत होती है, इस से लोग यह अनुमान करने लगे थे, कि इलेक्ट्रीसिटी (Electricity) का इस से विशेष सम्बन्ध है। परन्तु इलेक्ट्रीसिटी से किसी मिश्रित पदार्थ का पृथकरण तो हो सकता है, परन्तु ऐसी स्थिति मालूम नहीं हुई, कि इलेक्ट्रीसिटी के ज़ोर से शीघ्र इतनी उष्णता वाष्प से निकली हो, कि वाष्प जमकर ओला बन जाय। वाष्प पानी की बूंद बनने बाद बड़ी देर वायु में लटकी नहीं रह सकती, कि ऊँची रह कर ऊपर की सर्दी से उसके ओले बन जायँ। ऐसा होना संभव है, कि किसी कारण से, जो अभी तक ज्ञात नहीं हुआ, वायु की उष्णता में अत्यन्त शीघ्रता के साथ ऐसी कमी होती हो, कि उसके शीतल झोकों से वाष्प जो बादल के रूप में उस वायु में स्थित है, शीघ्र गाढ़ा बन कर ओला बन जाय।

९८—ओले दो पट्टी में गिरा करते हैं, जिनके बीच में केवल मेह बरसता है। बहुधा ओले मटर या जंगली बेर के बराबर गिरा करते हैं, परन्तु कभी कभी बतख़ के अंडे के बराबर भी देखने में आये हैं। यों तो ओले के बड़े होने के बारे में बहुत सी दन्त-कथाएँ सुनी जाती हैं, परन्तु उनका बयान करना इस पुस्तक में व्यर्थ है। ओले का तूफ़ान टारनेडो (Tornado) (जिसका बयान आगे आयेगा) की तरह चक्कर खाता हुआ आता है, इसकी चौड़ाई विशेष

नहीं होती, और न बहुत दूर तक जाता है। ओले रात को नहीं गिरते, और प्रात काल में भी कम गिरा करते हैं, बहुधा तीसरे पहर को या सायङ्काल के समय गिरा करते हैं । समशीतोष्ण कटिबन्ध में ओले मैदान में अक्सर गिरते हैं, और पहाड़ पर बहुत ही कम ।

नवाँ अध्याय ।

—०:०:०—
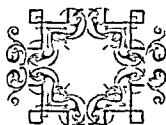
बिजली की चमक और बादल की गरज ।

९९.—बिजली की चमक और बादल की गरज से कौन मनुष्य अजान है? ये आश्चर्य-जनक और भयङ्कर दृश्य कुछ ऐसे चौंका देने वाले हैं, कि कोई मनुष्य जिसके नेत्र और श्रवण-शक्ति नष्ट न हो गई हो, यदि चाहे भी कि इन से अजान रहे, तो भी रह नहीं सकता। यही कारण है, कि प्रत्येक काल में नये नये विश्वास इन सृष्टि-चमत्कारों (Phenomenon) के विषय में उपजते और फैलते गये। जगत् आश्चर्य-जनक वस्तुओं को पूजनेवाला है, जिससे बहुत सी अचरज पैदा करनेवाली भयङ्कर अविश्वसनीय कथाएँ बिजली के बारे में फैलीं, परन्तु आश्चर्य यह है कि बुद्धि द्वारा पूर्ण रीति से उनकी जांच नहीं की गई। इस कारण वैज्ञानिक अन्वेषण का कहीं पता नहीं। कुछ बेजड़ अनुमान सुनने में आते हैं, जिनमें से केवल दो वर्णन करने योग्य हैं। एक तो यह है, कि प्राचीन लोगों का यह अनुमान था, कि जिस प्रकार परस्पर दो पत्थरों के रगड़ खाने से आग निकला करती है, उसी प्रकार एक बादल दूसरे बादल

से रगड़ खाता है, तो चमक और गरज उत्पन्न होती है। बादल क्या वस्तु है हम ऊपर स्पष्ट रीति से वर्णन कर आये हैं, जिसके अवलोकन से जाना जा सकता है, कि यह अनुमान कितना सत्य है। दूसरा सिद्धान्त यह था, कि सूर्य और पृथ्वी के मध्य बादल और धूल आजाने से जो किरणें पृथ्वी पर आ जाने से रुक जाती हैं, वे जब अपने वेग से शीघ्र बादल और धूल में से निकलती हैं, तो आवाज़ और चमक पैदा होती हैं, परन्तु बिजली की चमक और बादल की गरज रात को भी होती है. इस कारण इस बात को यों बढ़ाया, कि ये पूर्वोक्त गुण केवल सूर्य के साथ ही संबन्ध नहीं रखते, किन्तु मङ्गल, बृहस्पति और शनैश्चर की किरणों में भी ये गुण हैं। निःसन्देह यह सिद्धान्त बड़ा मनोरञ्जक है, परन्तु इस सिद्धान्त की जड़ केवल अनुमान पर है, जिसको बुद्धि मान नहीं सकती।

१००—बिजली का अन्वेषण सफलतापूर्वक बहुत काल तक न हो सका, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं। क्योंकि प्रकृति की जिस बड़ी शक्ति के साथ इसका सम्बन्ध है, उसके अस्तित्व को भी आज से दो सौ वर्ष पूर्व लोग नहीं जानते थे। इस शक्ति से हमारा आशय इलेक्ट्रीसिटी है। हमारे पाठक इसके अमूल्य लाभों से अज्ञान नहीं होंगे। यह इसी शक्ति की कृपा है, कि तार द्वारा सहस्रों कोसों के अन्तर से हम बे रोक टोक एक दूसरे से बात चीत कर

सकते हैं। बिजली की रोशनी इसी इलेक्ट्रीसिटी के द्वारा तय्यार की गई है, कि जिसने रात को दिन बना दिया है। यद्यपि इलेक्ट्रीसिटी का विषय दूसरे इल्म से सम्बन्ध रखता है, जिसका इस छोटी सी पुस्तक में वर्णन करना कठिन है, परन्तु हम साधारण रीति से, संक्षेपतः इस इल्म के मुख्य तत्वों का वर्णन करना आवश्यकीय समझते हैं, ताकि जो विषय हम लिख रहे हैं इसके समझने में सुगमता हो।

१०१—इलेक्ट्रीसिटी प्रकृति का एक शक्ति है, जो कि विशेष करके आकर्षण और निराकरण रूप में प्रकट होती है। परन्तु प्रकाश, उष्णता, समाघात, रासायनिक विच्छेदन, और बहुत सी दूसरी बातें इसके प्रभाव से उत्पन्न होती हैं। चिरकाल से केवल इतनी बात मनुष्यों को ज्ञात थी, कि यदि अम्बर को रेशमी कपड़े पर रगड़ें तो उसमें घास के तिनकों और दूसरी हलकी वस्तुओं के आकर्षण करने की शक्ति आजाती है। दो तीन सौ वर्ष हुए इसमें इतनी और अधिकता हुई, कि यह गुण केवल अंबर के साथही सम्बन्ध नहीं रखता, किन्तु और और वस्तुओं में भी यह गुण पाया जाता है। बस इसी छोटीसी नींव पर, सत्तर अस्सी वर्ष के थोड़े से कालमें, इलेक्ट्रीसिटी का अद्वितीय बड़ा प्रासाद बना है। इससे ऐसे आश्चर्य-जनक तत्त्व प्रकट हुए, और होते जाते हैं, कि जिन के आगे ख़्याली जादू भी मात है। इलेक्ट्रीसिटी क्या वस्तु है, इसको कोई भी नहीं

जानता। समझने समझाने की सुगमता के लिए यों मान लिया है, कि इलेक्ट्रीसिटी एक तरल अगोचर और निर्भार वस्तु है, जो समस्त वस्तुओं में अनियत प्रमाण से पाई जाती है। इसकी दो जाति हैं, एक को धनात्मकविद्युत (Positive Electricity) कहते हैं, और दूसरी को ऋण-विद्युत (Negative Electricity)। ये नाम किसी विशेष कारण से नहीं दिये गये हैं, केवल पहिचान के लिए रख लिये गये हैं। जब तक ये दोनों जातियाँ किसी वस्तु में मिली रहती हैं, दोनों एक दूसरी के प्रभाव को नष्ट करती हैं। रगड़ से, रासायनिक प्रभाव से और बहुत से दूसरे कारणों से, दोनों जाति की इलेक्ट्रीसिटी एक दूसरी से जुदा हो जाती है। जब दो वस्तुएं परस्पर रगड़ी जाती हैं, तो दोनों की इलेक्ट्रीसिटी में विघट्टन उत्पन्न होता है, इस प्रकार से कि एक से धनात्मक-विद्युत् निकलकर दूसरी में आजाती है, और दूसरी की ऋण-विद्युत् निकलकर पहिली में चली जाती है, जिससे एक में पूरी धनात्मक-विद्युत् और दूसरी में ऋण-विद्युत् रह जाती है। दो वस्तुएँ जोकि एकही जाति की विद्युत् से पूरित हों, एक दूसरी से हटती है, विपरीत इसके, जो दो वस्तुएं भिन्न भिन्न जाति की इलेक्ट्रीसिटी से पूरित हों, एक दूसरी को आकर्षण करती हैं, जो दो वस्तुएं भिन्न भिन्न वा एक प्रकार की इलेक्ट्रीसिटी से पूरित हों, जितना उनमें अन्तर

अधिक होगा, उतनी ही उनमें आकर्षण और अलग हटाने की शक्ति न्यून होगी।

१०२—कोई कोई वस्तुएं ऐसी हैं, जिन पर से होकर इलेक्ट्रीसिटी सुगमता से चली जाती है, और कोई कोई वस्तुएं ऐसी हैं, जिनपर से इलेक्ट्रीसिटी सुगमता से जा नहीं सकती, बरन रुक जाती है। इसमें पहिली को विद्युत-चालक (Conductor) और दूसरी को विद्युत्-अचालक (Bad Conductor or Non-conductor) कहते हैं। सब धातु, पानी, बर्फ़, जानवर और वनस्पति विद्युत्-चालक हैं। एल्कोहाल (Alcohol) ईथर, कुटा हुआ सीसा, शुष्क वायु, शुष्क गस, शुष्क काग़ज़, रेशम, हीरा और दूसरे जवाहिरात, काच, रबर, गंधक और राल विद्युत्-अचालक हैं। वायु में बहुधा कभी कम कभी ज्यादा धनात्मकविद्युत उपस्थित रहती है।

१०३—पृथ्वी में न्यूनाधिक ऋण विद्युत पाई जाती है, परन्तु कभी कभी इसके विपरीत दशा भी देखने में आई है। जब वाष्प से परिपूरित वायु ऊपर जाता है, और वाष्प से बादल बनते हैं, और ऊपर के शीतल वायु से वाष्प शीघ्र गाढ़ा बनकर बूंदों का रूप धारण करता है, उस समय इस शीघ्रता-पूर्वक गाढ़ापन उत्पन्न होने के कारण विद्युत का प्रकाश नमनाक वायु में होता है। इसी को हम बिजली कहते हैं।

इस वर्णन को हम एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर देते हैं। मान लो कि दस छोटी छोटी गोलियां ऐसी हैं, कि यदि उन सबको कूट कर मिला दी जायँ, ता एक बड़ा गोला बन जायगा, परन्तु इन दस गोलियों की सतह का क्षेत्रफल इस बड़े गोले की सतह के क्षेत्रफल से अधिक तर होगा। यदि सब गोलियों पर कागज़ की खोली चढ़ाई जाय, ता जितना कागज़ बड़े गोले की खोलो में खर्च होगा, उससे अधिक तर छोटी दस गोलियों की खोली में खर्च होगा। जब पानी वाष्प के रूप में होता है, उस समय बूंदें ऐसी छोटी छोटी होती हैं, कि बड़े प्रबल सूक्ष्मदर्शक से भी देखी नहीं जातीं। ऐसी करोड़ों बूंदों के मिलनेसे एक मेह की बूंद बनती है, इस लिए जितनी इलेक्ट्रीसिटी करोड़ों छोटी बूंदों की सतह पर होती है वह सब एक मेह की बूंद में नहीं आसकती। यही शेष रही हुई इलेक्ट्री सिटी बिजली के रूप में दृष्टिगोचर होती है। इलेक्ट्रीसिटी का बिजली के रूप से चमक कर प्रकट होना कुछ मेह की बूंद ही पर निर्भर नहीं है, किन्तु जब नमनाक और उष्ण वायु ऊपर जाता है, और वहां शीतल वायु के संमेल से वाष्प में गाढ़ापन पैदा होता है, जिससे अदृश्य वाष्प शीघ्रतर बादलों का स्वरूप धारण करने लगता है, और इससे बहुधा इलेक्ट्रीसिटी बिजली के रूप में दिखाई देती है। जब इलेक्ट्रीसिटी की लहर एक वस्तु से निकल दूसरी वस्तु में जाती है, तब चमक और आवाज़ अवश्य होती है।

यही कारण है कि बिजली की चमक के पश्चात् बादल गरजता है । ध्यान रहे कि इलेक्ट्रीसिटी बहुधा उसी समय प्रकट होती है, जब कि वाष्प में गाढ़ापन शीघ्रतम उत्पन्न होता है । जब वाष्प धीरे धीरे गाढ़ा होता है, और धीरे धीरे उससे बादल बनते हैं, और घिर कर बरसते हैं, उस वक्त, इलेक्ट्रीसिटी बहुत कम दृष्टिगोचर होती है । और यही कारण है, कि जब बादल घिर कर आता है, और कई रोज़ झड़ी लगी रहती है, तब बिजली बहुत कम चमकती है। कभी इस के विपरीत दशा भी देखने में आती है । कड़क चमक भादों के मेह में अवश्य होती है, क्योंकि बादल शीघ्र आते हैं, और कड़क चमक के साथ बरस कर निकल जाते हैं । तूफान, टारनेडो और ओलों के बादल के साथ बिजली की चमक और बादल की गरज अवश्य होती है, क्योंकि इन सब में शीघ्रतम वाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न होता है ।

१०४—अब हम उन प्रयोगों का वर्णन करते हैं, जिन के द्वारा यह बात सिद्ध हुई कि इलेक्ट्रीसिटी और बिजली एक ही वस्तु है । सत्तहवीं शताब्दि के मध्य से इलेक्ट्रीसिटी के गूढ़ भेद प्रकट होने लगे थे । इस शताब्दि के अंत में बुद्धिमानों का ध्यान इस ओर झुका कि इलेकिट्रीसिटी और बिजली एक वस्तु है । सन १७५२ ई० में फिलडेलफिआ (Philadelphia) का डाक्टर फ्रांक्लिन (Dr. Franklin) और फ्रांस के दो विज्ञानी इस बात पर कटिबद्ध हुए, कि इस सृष्टि-चमत्कार को

प्रयोग से सिद्ध करें। यह ज्ञात हो चुका था, कि धात की नोकदार सली विद्युत्चालक है, अर्थात् धात की नोकदार सली पर से इलेक्ट्रीसिटी सुगमता से जाती है। यह उपाय सोचा गया, कि धात की सली बड़े ऊंचे मकान पर लगायें. और देखें कि चमक और कड़क वाले बादल जब इसके निकट आयें, उस समय इस पर से इलेक्ट्रीसिटी के सदृश बिजली भी जाती है या नहीं। फ्रांस के विज्ञानियों ने तो मकानों पर सलियां लगाईं। डाक्टर फ्रांक्लिन ने एक पतङ्ग उड़ाया. जो कि रेशम के कपड़े का बना था जिस का ठड्डा धात का था, ऊंचा सिरा नोकदार था, और डोर सन की थी। उस सन की डोर के अंत पर एक कुंजी धात की बांधी थी, और कुंजी से हाथ तक पकड़ने के लिये रेशम की डोरी लगाई थी। रेशम की डोरी इस प्रयोजन से लगाई थी कि रेशम अचालक है। यदि प्रयोग सत्य निकल जाय, तो बिजली कुंजी तक आ कर रुक जायगी, रेशम की डोर पर से इस के अचालक होने के कारण न जायगी और प्राणों को कोई हानि नहीं पहुंचेगी। दोनों प्रयोग सत्य निकले। मकानों की सलियों पर से जब बादल निकला, तो ज्वाला निकलने लगी। और पतंग पर से जब बादल निकला. तो डोर के रोम खड़े हो गये, और कुंजी से ज्वाला निकलने लगी। रूस में एक प्रोफ़ेसर ने भी पतङ्ग के द्वारा प्रयोग किया, परन्तु उसने रेशम की डोर का उपयोग नहीं किया, और बिजली के धक्के से उसके प्राण गये।

१०५—संक्षेपतः यह बात सिद्ध हो गई, कि बिजली और इलेक्ट्रीसिटी एक ही वस्तु है, यदि भेद है तो यही कि इलेक्ट्रीसिटी का प्रकट होना मनुष्यों की क्रिया से सम्बन्ध रखता है, और बिजली प्रकृति के सृष्टि-चमत्कारों में से है। जो वस्तुएं विद्युतचालक हैं, उन्हीं पर बिजुली के पतन की आशङ्का होती है। जब वृष्टि होते समय बिजली चमक रही हो और बादल गरजता हो, वृष्टि से बचने के लिये छाता लगाना, वृक्षों के नीचे वा ऐसे मन्दिर में जिस के धात का फ़लश लगा हो, आश्रय लेना भय से रहित नहीं।

१०६—बिजली और कड़कने वाला बादल जितना नीचा होता है, उतनी ही बिजली के गिरने की आशङ्का अधिक होती है। आवाज़ ५ सेकण्ड में १ मील चलती है, इस कारण यदि बिजली की चमक से ५ सेकण्ड के पश्चात् बादल की गरज सुनाई दे, तो समझना चाहिए, कि बादल एक मील की ऊंचाई पर है। यदि वर्षा हो रही हो, और बिजली की चमक और बादल की गरज में अंतर बहुत न्यून हो, तो, बिजली के गिरने की आशङ्का अधिक होती है, क्योंकि वायु और पृथ्वी भिन्न प्रकार की इलेक्ट्रीसिटी से पूरित होती है, और पानी चालक है, इसलिए तीन कारण आकर्षण के उत्पन्न हो गये—एक तो दो वस्तुओं का भिन्न इलेक्ट्रीसिटी से पूरित होना, दूसरा ऐसी दोनों वस्तुओं का निकट होना, और तीसरा इन दोनों वस्तुओं का एक चालक द्वारा जुड़ना।

१०७—बहुधा देखने में आया है, कि मनुष्यों की अपेक्षा और जानवरों पर बिजली अधिक गिरती है इसका कारण कदाचित् यह होगा, कि मनुष्यों के वस्त्र बहुधा अचालक होते हैं। फ्रांस और दूसरे देशों में मृत्यु के कारण की गिनती से ज्ञात हुआ है कि पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियाँ, और स्त्रिओं की अपेक्षा बच्चे बिजली से कम मरते हैं। इसका कारण तो यही है, कि बिजली नगरों की अपेक्षा मैदानों और क्षेत्रों में अधिक गिरती है, जहां पुरुष बहुधा अधिक पाये जाते हैं, और स्त्रियाँ बच्चे कम होते हैं। बस्तियों में बिजली के कम गिरने का कारण यह है, कि बस्ती की पृथ्वी किसी कारण से, जो कि अभी तक मालूम नहीं हुआ है, इलेक्ट्रीसिटी से बहुधा रिक्त होती है। बस्तियों मे कदाचित् बिजली गिरती है, तो ऊंचे गृह और गगनचुम्बी मीनार उसका लक्ष्य हुआ करते हैं।

१०८—बिजली के धक्के से कभी कभी अङ्ग में सुन्नता आ जाती है, और दृष्टि तथा श्रवण शक्ति में पूर्ण हानि पहुँच जाती है, कभी यह हानि चिरकाली होती है, और कभी थोडे दिनों में इसका चिन्ह भी नहीं रहता। कभी ऐसा भी देखने में आया है, कि गठिया और दूसरे रोगों से ग्रसित लोगों पर जब बिजली गिरी है, तो रोग नष्ट हो गये हैं। इन्हीं कारणों से प्राचीन काल की कोई कोई जातियों में यह विश्वास दृढ होगया था, कि जिन लोगों पर बिजली

गिरती है, उन पर देवताओं की प्रसन्नता होती है। और जिन क़बरों पर बिजली गिरती थी, वे पवित्र समझी जाती थीं। जब से यह बात सिद्ध होगई है कि इलेक्ट्रीसिटी और बिजली एक ही वस्तु है, तब से कोई कोई रोगों के इलाज में, विशेष कर के उन में, जो नाड़ी और मुस्ली के साथ सम्बन्ध रखते हैं, इलेक्ट्रीसिटी से सहायता ली जाती है। बिजली के हलके धक्के से अत्यन्त तकलीफ़ होती है, परन्तु प्रबल धक्के से ऐसी अचानक सुन्नता समस्त अंग में पैदा हो जाती है, कि थोड़ी भी व्यथा वा पीड़ा मालूम नहीं होती। कोई कोई लोग बिजली के प्रबल धक्के से अचानक थोड़ी देर के लिए मृतक के समान निर्जीव होगये हैं, और जब शुद्धि में आये, और उन से हाल पूछा गया, तो मालूम हुआ कि उन को अपने ऊपर बिजली के गिरने का कुछ भी चेत नहीं था। ऐसी ही हालत इलेक्ट्रीसिटी के गिरने से भी होती है। प्रोफ़ेसर टिण्डल अपना अनुभव इस प्रकार वर्णन करते हैं, "छोटे से लिडनजार (Leyden jar) से यदि कभी हलकासा धक्का लग गया है, तो उस से अत्यन्त व्यथा हुई है, परन्तु मैं एक बार बहुत से लोगों के सन्मुख बड़े बड़े १५ लिडनजार से इलेक्ट्रीसिटी का प्रयोग कर रहा था ऐसे में अचानक मेरा हाथ तार को छूगया, जिस से ऐसा धक्का पहुंचा, कि क्षण भर के लिए देह में प्राण न रहे, परन्तु थोड़ी भी व्यथा नहीं हुई, और जब एक दो सेकण्ड में मेरी स्थिति ठीक हुई, तो मुझे मालूम हुआ कि मैं

लोगों के सम्मुख कल के निकट उपस्थित हूं । कुछ कुछ बाहरी हालतों से मुझे मालूम हुआ, कि मुझ पर इलेक्ट्रीसिटी का सदमा पहुँचा है। समझ की शक्ति आश्चर्य जनक शीघ्रता के साथ लौट आई, परन्तु देखने की शक्ति को अपनी स्थिति में आने में थोड़ी सी देर हुई, क्योंकि मुझ को अपना शरीर टुकड़ा टुकड़ा दिखाई देता था, और ऐसा मालूम होता था कि दोनों हाथ शरीर से विलग वायु में लटके हुए हैं। स्मृति और बुद्धि को अपनी स्थिति पर आने के थोड़ी देर के पश्चात् दृष्टि भी अपनी हालत पर आई। इस घटना से मैं यह परिणाम निकालता हूँ, कि जो लोग बिजली से मरते हैं, उनको किसी प्रकार का दुःख नहीं होता, और बिना कष्ट पाये उनके प्राण निकल जाते हैं। मुझे ऐसा अनुभव प्राप्त करने की बड़ी चाह थी, जो इस समय अचानक पूरी हो गई।"

—:o:—

दसवाँ अध्याय।

—:o:—

तूफ़ान और टारनेडो (Tornado)।

१०९—तूफ़ान उस अत्यन्त प्रचण्ड पवन का नाम है, जो गोलाकार चक्कर खाता हुआ, और नीचे से ऊपर की ओर उठता हुआ, भूमध्य रेखा से दोनों ध्रुवों की ओर बढ़ता है। इस गोलाकार के बीचों बीच में परिधि की अपेक्षा वायु का दबाव बहुत न्यून होता है। इस का मार्ग लगभग शृंगाकार होता है। तूफ़ान का घेरा सर्वदा एक समान नहीं होता, कभी छोटा कभी बड़ा होता है। इसका क्षेत्रफल २० मील से लेकर सैकड़ों ही नहीं वरन हज़ार डेढ़ हज़ार मील का होता है। समशीतोष्ण कटिबन्ध में, अर्थात् ३५ अक्षांश से लेकर लगभग ध्रुव तक, तो छोटे छोटे तूफ़ान बहुधा आया करते हैं। इन देशों में बहुत करके इन्हीं तूफ़ानों के साथ वर्षा हुआ करती है। यद्यपि कभी कभी इन से भी जानवर व माल को हानि पहुँचती है, परन्तु ये तूफ़ान बहुत करके हानि-कारक नहीं होते। परन्तु वह तूफ़ान जिसे महाप्रलय कहना अतिशयोक्ति न होगी, उष्ण कटिबन्ध में ही बहुधा आता है। इस तूफ़ान का पूरा बल तो समुद्र पर होता है, जहाँ लहरें मानो आकाश से टकराती हैं, बड़े बड़े जहाज़ तूल के समान उलट पुलट जाते हैं, और लहरों के परस्पर के

संघट्टन का शब्द सैकड़ों कोसों तक सुनाई देता है। पृथ्वी पर यद्यपि तूफ़ान का बल समुद्र की अपेक्षा बहुत न्यून होता है, तोभी जैसा सर्वनाश कुछ घण्टों में तूफ़ान से होता है, वैसा ज्वाला-मुखी-प्रस्फुटन को छोड़ कर, कदाचित् ही किसी और घटना से होता हो। यदि किसी बसे हुए नगर पर तूफ़ान आता है, तो गृहों की छतें उड़ जाती हैं, दीवारें गिर जाती हैं, और सहस्रों नगर-वासी दब मरते हैं। संक्षेपतः थोड़ी सी देर में नगर के नगर ऐसे उजड़ जाते हैं, मानो कई दिनों से उजड़े पड़े हों।

११०—तूफ़ान के आने से कई दिन पहिले वायु बंद हो जाता है, उस (वायु) में मामूली स्वच्छता नहीं रहती, चारों ओर उदासी छा जाती है, धूप में मंदता आ जाती है, तारे मामूल से बड़े दृष्टि-गोचर होते हैं, परन्तु उनके प्रकाश में मंदता होती है, और चौपाये घबरा कर जगह जगह आश्रय ढूढ़ते फिरते हैं। इस भयङ्कर सन्नाटे के पश्चात् अचानक अंधकार बढ़ने लगता है, समुद्र में प्रचण्ड लहरें उठने लगती हैं, चारों ओर तिमिर आच्छादित हो जाता है, वायु-वेग प्रतिक्षण बढ़ने लगता है, फिर मूसलधार पानी गिरने लगता है, और क्षण क्षण में बिजली चमकती और मेघ गर्जना करता है। स्टोरी ऑफ दी अटमोस्फियर (Story of the Atmosphere) का कर्ता अपनी आखों देखे हुए तूफ़ान के वर्णन में लिखता है कि—

"१ नवम्बर सन् १८७६ को बंगाले के उत्तर प्रान्तों में भयङ्कर तूफ़ान आया था, जिस से ब्रह्मपुत्रा नदी में ऐसा

बड़ा पूर आया, कि उसके आस पास की बस्तियों के एक लक्ष मनुष्य डूब कर मर गये" ।

१११—तूफ़ान के आकार को देखते बगुला उस का छोटा सा नमूना, अर्थात् जिस तरह बगुले में वायु चक्कर खाता और नीचे से ऊपर उठता हुआ आगे बढ़ता है, उसी प्रकार तूफ़ान में भी वायु चक्कर खाता नीचे से ऊपर उठता हुआ आगे बढ़ता है । भेद केवल इतना है कि तूफ़ान के वायु का चक्कर बहुत बड़ा वृत्ताकार और नियत दिशा में होता है. और मध्य में बिजली और गरज उसके साथ होते हैं; ये बातें बगुले में नहीं होतीं ।

११२—तूफ़ान का जन्मस्थान वह कटिबन्ध है, जहाँ का वायु सर्वदा स्थिर रहता है, जो (कटिबन्ध) उत्तर और दक्षिण की व्यापारी-हवाओं (Trade Winds) के मध्य स्थित है । इस डोलड्रम में वायु नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे चला करता है, और बहुत कम मालूम होता है, वह केवल उस समय चलने लगता है जब तूफ़ान आता है। जब सूर्य सायन मेष वा सायन तुला के निकट होता है, तब अर्थात् मार्च, एप्रिल, सेप्टेम्बर और आक्टोबर में डोलड्रम भूमध्य रेखा के बहुत ही निकट होता है । उस समय उष्णता की बहुतायत से बाष्प बहुत उठता है । जब बाष्प पानी से उठता है, तो पानी की उष्णता घटती जाती है, परन्तु यह उष्णता नष्ट नहीं होती, उस बाष्प में मानो धरोहर सी

इकट्ठी होती जाती है। जब ऊपर की सर्दी से वाष्प में गाढ़ापन उत्पन्न होने लगता है तब वाष्प की गुप्त उष्णता शीघ्र ही निकलने लगती है। स्मरण रहे कि जितनी शीघ्रता और बहुतायत से वाष्प उठता है, और जब उस में गाढ़ापन होने लगता है तब उतनी ही शीघ्रता और बहुतायत से उष्णता निकलती भी है। उष्णता का फैलाना वायु के चलने का कारण, और वायु का प्रचण्ड चलना तूफान का कारण है।

११२—उष्णता और गति के विषय में मुख्य नियम यह है, कि कोई वस्तु यदि गति में हो, और किसी तरह उस की गति में अचानक रोक उत्पन्न हो जाय, तो उस रोक से उष्णता पैदा होगी। उदाहरणार्थ एक ऐसी बन्दूक से गोली चलाई जाय, कि जिस की गोली एक मील तक पहुँचती हो, और पूर्ण दूरी तै करने से पहिले ही यदि किसी वस्तु से लगे तो इस से उस में उष्णता उत्पन्न होगी, अर्थात् स्थान छोड़ने की हरकत बदल कर गोली के परमाणु में हरकत पैदा हो जायगी; इसी का नाम उष्णता है। इस से विपरीत दशा भी सही है, अर्थात् जिस प्रकार स्थान बदलने वाली हरकतों के रोकने से उष्णता उत्पन्न होती है, उसी प्रकार उष्णता के फैलने और विशेष होने से स्थान बदलने वाली हरकत पैदा होती है। अतएव जब वाष्प के गाढ़े होने से शीघ्र तर उष्णता बहुतायत से पैदा होती है, और इस उष्णता से वायु फैलता है, तो वायु में गति उत्पन्न होती है।

वास्तव में वायु की गति नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे की ओर होती है, परन्तु पृथ्वी के भ्रमण के कारण उस में चक्कर पैदा हो जाता है, और इसी कारण से चक्कर खाता हुआ वायु ऊपर चढ़ता है। इस चक्कर खाने से वायु की गति घण्टे में सौ मील से अधिक होती है। तूफ़ान में चक्कर खाने वाले वायु की गति की यह स्थिति होती है—यदि तूफ़ान भूमध्य रेखा के उत्तर में आवे, और भूमध्यरेखा की ओर पीठ और उत्तर ध्रुव की ओर मुख करके देखा जाय, तो चक्कर खाने वाले वायु की चाल घड़ी की सुई की गति के विपरीत दृष्टि-गोचर होगी; और भूमध्यरेखा के दक्षिण में घड़ी की सुई की चाल के सदृश। अर्थात् दोनों ध्रुवों में से भूमध्य-रेखा की किसी ओर देखें, तो तूफ़ान के वायु का चक्कर उस ओर मालूम होगा जिस तरफ़ पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमती है।

११४—भूमध्यरेखा के निकट वायु के चक्कर का घेरा बहुत बड़ा नहीं होता, परन्तु ज्यों ज्यों तूफ़ान आगे बढ़ता है, घेरा बड़ा होता जाता है। उत्तर गोलार्ध में जब तूफ़ान आता है तब जो स्थान तूफ़ान के मार्ग में होते हैं, अर्थात् जिन स्थानों पर से हो कर तूफान का केन्द्र जाता है, वहां साधारण चिन्हों के पश्चात् सब से प्रथम ईशान के क्षितिज पर मेघ दृष्टि गोचर होता है। ये बादल नीचे अत्यन्त कृष्ण वर्ण के होते हैं, ऊपर अत्यन्त रक्त और सब से ऊपर दमकते हुए धवल। इस के साथ शीघ्र तर बिजली चमकती है, फिर

ईशान का वायु बहने लगता है, दक्षिण वायु तीव्र होने लगता है, बादल गरजने लगता है, अन्धकार छा जाता है, और बहुत प्रचण्ड वर्षा होने लगती है। दस बारह घण्टे यही स्थिति रहती है; पश्चात् एक साथ वायु बन्द हो जाता है, और बादल फट जाता है। वायु ऐसा बन्द हो जाता है, कि लगभग एक घण्टे तक बिलकुल सन्नाटा रहता है। पश्चात् नैऋत्य कोण से वायु के झोंके आने लगते हैं और पुनः घोर वृष्टि होने लगती है, और इस समय तूफ़ान का ज़ोर पहिले से अधिक तर होता है। दस बारह घण्टे तक यही स्थिति रहने के पश्चात् वायु चलना एक दम बन्द हो जाता है, आकाश स्वच्छ हो जाता है, और बिजली, बादल या मेघ का कोई चिन्ह शेष नहीं रहता है। यह स्थिति जो हमने वर्णन की है बंगाल की खाड़ी और चीन के समुद्र में देखने में आई है।

११५—अब हम इन तीन स्थितियों के कारण वर्णन करते हैं, कि क्यों प्रथम में वायु ईशान से आता है? और अन्त में उसके विपरीत नैऋत्य कोण से? और क्यों बीच में थोड़ी देर के लिए वायु बन्द हो जाता है? हम ऊपर लिख आये हैं, कि तूफ़ान भूमध्यरेखा के नजदीक से आरम्भ होता है, तूफ़ान का वायु घेरे की तरह चक्कर खाता हुआ आगे बढ़ता है, और इस घेरे के बीचों-बीच में पूर्ण सन्नाटा होता है। चक्कर खाने वाले वायु का वेग यदि भूमध्यरेखा की ओर

से देखा जाय, तो घड़ी की सूई के विपरीत दशा में होगा। अब इन नक़शों को देखना चाहिए, नक़शा नम्बर १ में मानो तूफ़ान स्थान 'क' पर आरम्भ हुआ, उस समय वायु की दशा ईशान होगी; नक़शा नम्बर २ में तूफ़ान का केन्द्रस्थान 'क' में पहुंचा, (क्योंकि तूफ़ान के घेरे के बीचों बीच में सन्नाटा होता है, इस कारण वायु 'क' स्थान में बंद होगा); नक़शा नम्बर ३ में तूफ़ान के घेरे का वह भाग 'क' में होगा जिसकी दशा नैऋत्य कोण में है। वास्तव में वायु का चलना एकही दशा में होता है, परन्तु वायु चक्कर खाता हुआ बढ़ता है इस कारण जो दशा आरंभ में होती है अन्त में उसके विपरीत होना ध्रुव है।

टारनेडो (Tornado)

११६—टारनेडो के लिए हमारी भाषा में कोई शब्द नहीं है। हमारे देश में इसको भी तूफ़ान कहते हैं, यद्यपि इसमें और तूफ़ान में बड़ा भेद है। तूफ़ान के चक्कर को पृथ्वी के घूमने से विशेष सम्बन्ध है, क्योंकि यह चक्कर जैसा कि ऊपर वर्णन कर आये हैं एकही दिशा में होता है, विपरीत इसके टारनेडो के वायु का चक्कर इतना छोटा सा होता है, कि पृथ्वी का घूमना इतने से स्थान में कोई ऐसा प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सकता, जोकि गणना में आ-

क
नं० २
क
नं० ३
क

ग्यारहवाँ अध्याय।

—:o:—
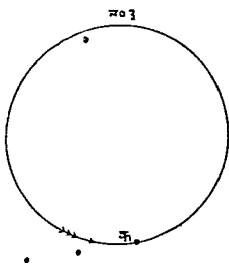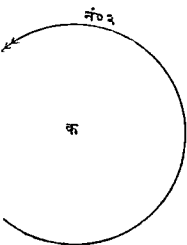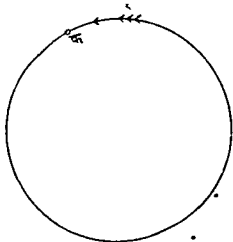
सृष्टि-चमत्कार (Phenomenon)

११९—जगत् के ये सृष्टि-चमत्कार, जोकि वायु और प्रकाश के संमेलन से उत्पन्न होते हैं, केवल इनकी सुन्दरता ही को देखी जाय, तो इतने मोहक और मनोहर हैं, कि प्रत्येक काल और प्रत्येक देश के कवि और विद्वान लोग इनकी असीम प्रशंसा करते रहे हैं, और इल्म के लिहाज़ से भी वे इतने आश्चर्य-जनक हैं, कि मामूली लोगों की बात ही क्या, परन्तु प्रत्येक काल के बड़े बड़े विज्ञानी भी इन सृष्टि-चमत्कारों की जांच और कारण के अन्वेषण में दत्तचित्त रहे हैं। वास्तव में ये सृष्टि-चमत्कार हैं भी ऐसे ही, कि प्रत्येक व्यक्ति के ऊपर अपनी रुचि के अनुसार इनका प्रभाव पड़ेगा। क्या कोई मनुष्य ऐसा भी है कि जिसको थोड़ा सा भी आनन्द जगत् की आश्चर्य-जनक वस्तुएँ देखने से न आता हो, और कभी उसके मन में ये प्रश्न न उत्पन्न हुए हों—यह नीला गुंबद जिसको आकाश कहते हैं क्या है? सन्ध्या क्यों फूलती है? इसमें यह सुन्दर रंग कहाँ से आता है? इन्द्रधनुष क्या वस्तु है? कभी कभी चन्द्र और सूर्य्य के चारों ओर प्रकाश-मण्डल क्यों होता है? मरुस्थल में

घूमने वाले लोगों को वंचित करने वाली मृगतृष्णा क्या वस्तु है ? यह प्रकरण वायु और आकाश से सम्बन्ध रखता है, इसलिए जहाँ तक कि प्रकाश के तत्त्वों का वर्णन न किया जाय, इनका स्पष्ट वर्णन करना अशक्य है। इस कारण स्पष्ट रीति से, परन्तु संक्षेपतः, प्रकाश के उन तत्वों का वर्णन करते हैं, जो हमारे इस प्रकरण से विशेष सम्बन्ध रखते हैं।

१२०—यद्यपि हमारी पृथ्वी को थोड़ा बहुत प्रकाश तारागण से पहुँचता है, परन्तु वास्तव में हमारी पृथ्वी के लिए सब से बड़ा प्रकाशदाता सूर्य्य है। हम पूर्व वर्णन कर आये हैं, कि विज्ञानियों का यह माना हुआ सिद्धान्त है, कि समस्त विश्व एक अगोचर तरल वस्तु से भरा हुआ है, जिस को ईथर कहते हैं। केवल विश्व ही ईथर से पूरित नहीं, बरन हर वस्तु के एक एक परमाणु में ईथर दौड़ा हुआ है। इसी ईथर के द्वारा किरणें सूर्य, तारे इत्यादि से, लहराती हुई हर तरफ़ जाती हैं। ये लहरें प्रकाश और उष्णता दोनों को ले जाती हैं। जब इन का प्रभाव नेत्र की नाड़ियों पर पड़ता है, तो रंग मालूम होते हैं, और जब त्वचा पर पड़ता है, तो उष्णता। सूर्य की किरणें, जो हम को चमकती हुई श्वेत दिखाई देती हैं, वास्तव में नीचे लिखे हुए रंगों की लहरों से मिल कर बनी हैं—लाल, नारंगी, पीत, हरा, आसमानी, नीला और कासनी।

सूर्य की किरणें जब त्रिपार्श्व (Prism) में होकर जाती हैं तो ये रंग अलग अलग हो जाते हैं । प्रत्येक वस्तु को रंग प्रकाश से प्राप्त होता है, क्योंकि वस्तु में कोई रंग उपस्थित नहीं है। गुलाब का पुष्प गुलाबी रंग का दीखता है, इस का कारण यह है, कि गुलाब का पुष्प सब रंग की लहरों को शोषण करके थोड़ी सी लाल रंग की लहर को उचट जाने देता है । वृक्ष के पत्ते हरे दृष्टि गोचर होते हैं, क्योंकि इन में यह गुण है, कि प्रत्येक रंग की लहर को शोषण कर के, केवल हरे रंग की लहर को उचटने देते हैं ।

१२१—किरणें, सूर्य, तारे आदि से निकल कर विश्व में एक दम फैल नहीं जाती हैं, परन्तु इन को दूरी तै करने के लिए थोड़ा विलम्ब लगता है। किरणें एक सेकण्ड में १,८६,००० मील चलती हैं। सूर्य की किरणें पृथ्वी तक ८ मिनिट में पहुँचती हैं। यदि सूर्य रूपी दीपक बुझ जाय, तो बुझने के ८ मिनिट के पश्चात् हमको मालूम होगा । जो तारे हमारी पृथ्वी से अत्यन्त निकट हैं, उन का प्रकाश हमारी पृथ्वी पर ३½ वर्ष में पहुँचता है ।

—:o:—

आकाश और सन्ध्या का फूलना ।

१२२—हमारी पृथ्वी की रम्यता और मनोहरता, इस के शरद और बसन्त काल, इस के बहुत से सृष्टि चमत्कार, (Phenomenon) मोहक दृश्य और इस पर जीव-धारियों का

अस्तित्व, केवल इसी नीले छत्र के कारण है, जिस को आकाश कहते हैं, और आकाश का अस्तित्व वायु के कारण है, जैसा कि आगे चलकर हमारे लिखने से व्यक्त होगा। यह पुस्तक अधूरा रह जायगा यदि इस में यह नहीं लिखा जाय, कि आकाश क्या वस्तु है? इस कारण, हम इस विषय में, प्राचीन और वर्तमान काल के विज्ञानियों के मतों का संक्षेप रीति से वर्णन करते हैं।

१२३—प्राचीन काल में लोगों का यह अनुमान था, और अब भी पुराने ख़याल के लोग यही ख़याल करते हैं कि आकाश का नीला रंग केवल दृष्टि की सीमा है। परन्तु कोई कारण इस मत के समर्थन में नहीं बतलाया गया, कि दृष्टि की सीमा पर नीला रंग कहां से पैदा हुआ? पिछले विज्ञानियों में से बहुतों का ख़याल यह हुआ, कि नीला आसमान कुछ भी नहीं केवल वायु का रंग है, परन्तु सिर की ओर वायु का पटल न्यून, और क्षितिज की ओर बहुत अधिक है, इस लिए यदि नीला आकाश वायु का रंग है, तो ऐसा होना चाहिए था, कि क्षितिज की ओर नीला रंग गहरा, और सिर के ऊपर हलका होता, परन्तु देखने में इस के विपरीत दशा आती है। इसके सिवाय जैसा प्रोफेसर टिण्डल कहते हैं, कि सायङ्काल और प्रातःकाल में सूर्य की किरणें वायु के बड़े पटल में से होकर जाती हैं, उस समय आकाश क्षितिज पर लाल क्यों होता है? क्या श्वेत किरणें नीले वायु के बड़े

पटल में से जाने से पीली, नारंगी और लाल हो सकती हैं ? अब हम इस नीले आकाश के विषय में इन प्रोफ़ेसर के मत को, जो अधुना सत्य माना जाता है, संक्षेपतः वर्णन करते हैं।

१२४—सूर्य की श्वेत किरणें इन रंगों से मिलकर बनी हैं—लाल, नारंगी, पीला, हरा, आसमानी, नीला, और कासनी। जब सूर्य की किरणें वायु में प्रवेश करती हैं, तो उन छोटे छोटे परमाणु और अदृश्य पानी की बूंदों से, जो हर समय वायु में लटकती और उपस्थित रहती हैं टकराती हैं। किरण के प्रत्येक रंग की लहर का कुछ न कुछ भाग इन परमाणु की रोक से वायु में रुक जाता है, परन्तु इतना नहीं कि उन सब के मिलने से श्वेत रंग उत्पन्न हो। आसमानी रंग की लहरें बहुत छोटी परन्तु गिनती में बहुत अधिक होती हैं, जिन पै इन परमाणुओं की रोक का प्रभाव बहुत ही विशेष होता है। आसमानी रंग की लहरें प्रत्येक परमाणु से उचट कर वायु में छिटक जाती हैं, और इन्हीं के उचटने से यह आसमानी रंग का प्रकाश फैला हुआ है, जो आकाश के नाम से प्रसिद्ध है। स्मरण रहे, कि निर्मल वायु में प्रकाश फैलाने की शक्ति नहीं है।

१२५—अब सन्ध्या के फूलने का हाल सुनिए—ज्यों ज्यों सूर्य क्षितिज की ओर झुकता जाता है, त्यों त्यों किरणों को यथाक्रम वायु के बड़े पटल में से, विशेष करके असंख्य परमाणु

और वाष्प के बहुत बड़े विभाग में से होकर जाना पड़ता है। इसलिए जितना सूर्य क्षितिज के निकट होता जाता है, परमाणु की रोक से छोटी लहरें किरणों में से न्यून होती जाती हैं। सब से प्रथम आसमानी लहरों में स्पष्ट रीति से न्यूनता दृष्टिगोचर होती है। आसमानी लहरें किरणों में इतनी शेष नहीं रहतीं, कि श्वेत रंग किरणों में रह सके। परिणाम यह होता है, कि जब तक वायु का पटल बहुत अधिक नहीं होता, तब तक जो किरणें उस में से होकर आती हैं, पीतता लिए होती हैं। जब सूर्यास्त होता है, तो किरणें वायु के बहुत बड़े पटल और असंख्य परमाणु और वाष्प के बड़े विभाग में से, होकर आती हैं जिनके कारण कासनी और नीली लहरें हलकी होती जाती हैं, और हरे रंग की लहरें जितनी होनी चाहिएँ उतनी नहीं रहतीं। अब जो किरणें परमाणु और वाष्प में से होकर आती हैं, पहिले पीत, पश्चात् नारंगी और अन्त में लाल होती हैं। यही प्रकाश जो सूर्यास्त पश्चात् थोड़ी देर तक मौजूद रहता है, सन्ध्या का फूलना कहा जाता है। यह सूरत, जो हमने वर्णन की, क्षितिज से सम्बन्ध रखती है। सिर के ऊपर और उसके आस पास सूर्य के डूबने के पश्चात् भी आकाश का आसमानी रंग थोड़ी देर तक बना रहता है, क्योंकि यहाँ अब भी किरणें वायु के थोड़े पटल में से होकर आती हैं।

१२६—उष्ण कटिबन्ध में सन्ध्या कम फूलती है, और फूलती भी है तो बहुत थोड़े काल के लिए। सन्ध्या का फूलना समशीतोष्ण कटिबन्ध में, विशेष करके ऊंचे स्थानों में, बहुत मनोहर होता है। इन स्थानों में सन्ध्या बहुधा फूलती है, और बहुत देर तक रहती है। उष्ण कटिबन्ध में सन्ध्या के थोड़ी देर तक फूलने का कारण यह है, कि यहां पर सूर्य का मार्ग लग भग सीधा होता है, इसलिए अस्त होते ही सूर्य क्षितिज से दूर होजाता है। विपरीत इसके समशीतोष्ण कटिबन्ध में, विशेष करके उसके ऊपरी भाग में, सूर्य डूबने के पश्चात् बहुत देर तक क्षितिज के निकट रहता है, क्योंकि सायन वृत्त से जितने आगे बढ़ते जाइए, सूर्य का मार्ग टेढ़ा होता जाता है।

१२७—यह बात ध्यान देने के लायक़ है, कि सन्ध्या के फूलने का रंग किरणों की लहरों के रंग से उत्पन्न होता है, जो छोटी लहरों के रुक जाने के पश्चात् वायु के परमाणु और बाष्प में से गुजर कर आती हैं। और आकाश का रंग उन आसमानी रंग की लहरों के उचटने से उत्पन्न होता है। निकल कर आना और उचटने में बहुत बड़ा भेद है। जब तक परमाणु बहुत ही सूक्ष्म और अदृश्य बाष्प भी पारदर्शक और अदृश्य होता है, तब तक किरणें उचट कर और निकल कर आ सकती हैं। जब परमाणु गुरुता और विशेषता

के कारण अदृश्य नहीं होते हैं, और वाष्प में भी पारदर्शकता नहीं रहती है, तब सब लहरें उन से रुक जाती हैं।

इन्द्र-धनुष ।

१२८—इन्द्र-धनुष प्रकृति के अत्यन्त आश्चर्य-जनक सृष्टि-चत्कमारों में से एक है। ऐसा मालूम होता है कि मानो आकाश पर इस अन्त से उस अन्त तक एक बहुत बड़ी सात रंग की मिहराव बनी हुई है। यह मनोहर दृश्य प्रातः काल में पश्चिम के क्षितिज पर, और सायङ्काल में पूर्व के क्षितिज पर, उस समय देखने में आता है, जब कि वर्षा होती है, परन्तु सूर्य वादल में छिपा न हो, और क्षितिज से उस को ऊँचाई ४० दर्जे से कम हो। अथवा यों कहो कि देखने वाले की पीठ की ओर सूर्य देदीप्यमान, ४० दर्जे से नीचे हो, और सामने पानी बरसता हो, उसी समय, आकाश पर धनुष दिखाई देता है। हम अभी वर्णन कर आये हैं, कि सूर्य की श्वेत किरणें सात रंग का मिश्रण है, और जब ये किरणें त्रिपार्श्ववर्ती काच में से जाती हैं, तो सातों रंग अलग अलग हो जाते हैं। इस जगह मेह की बूंदें त्रिपार्श्व काच का काम देती हैं। जब सूर्य की किरणें बूंदों में प्रवेश करती हैं, तब उस से मोड़ उत्पन्न होता है, और बूंदों से बाहर निकल कर फिर मुड़ती हैं। इस दो बार के मोड़ से

सब रंग पृथक् पृथक् हो जाते हैं, तत्पश्चात् इन बूंदों से उचट कर देखने वाले को वे (रंग) सप्त रंग धनुष के रूप में नज़र आते हैं।

१२९—अब हम उस स्थिति को स्पष्ट रूप से वर्णन करते है, जो धनुष बनने के लिए आवश्यक है। सूर्य से ले कर देखने वाले की आँख तक एक सीधी लकीर मानो, और इस लकीर को उसी की सीध में बढ़ा दो, फिर जहाँ पर आँख हैं, उस चिन्ह से इस लकीर पर ४२½ दर्जे का एक कोण बनाओ, और इस कोण के इस भुज को जिस से तुमने यह कोण बनाया है, उसी की सीध में बढ़ा दो। इस भुज की सीध में जो मेह की बूंद होगी, उस से लाल रंग का आकाश दिखाई देगा, जब कि सूर्य की किरण उस बूंद पर पड़ेगी। वाम और दक्षिण में जो जो बूंदें इस प्रकार होंगी (अर्थात् जिन जिन बूंदों से ले कर आँख तक जो लकीरें आयेंगी, उस से आँख के चिन्ह पर उस लकीर के साथ ४२½ दर्जे का कोण बनेगा, जो सूर्य से आँख तक माना गया है) उन सब से यही सूरत प्रकट होगी; और लाल रंग का गोल एक पटका बन जायगा। यह पटका सूच्याकार शंकु की भूमि की सीमा होगा जिसका शीर्ष देखने वाले का आंख है। इस प्रकार देखने वाले की आँख से उसी पहिली रेखा पर एक और कोण ४०½ दर्जे का बनाओ, और इस रेखा को भी उसी की सीध में बढ़ादो। यह रेखा जिस बिंदु पर पहुंचेगी। वहां कासनी रंग

आकाश पर दिखाई देगा । और जो जो बूंदे वाम और दक्षिण इस प्रकार से होंगी सब से यही सूरत पैदा होगी, और कासनी रंग का एक गोल पटका बन जायगा, इन दोनों के बीच में धनुष के दूसरे रंग होंगे । धनुष के बीचो-बीच से ले कर आँख तक जो सीधी लकीर आती है, उसके और उस लकीर के बीचमें जो सूर्य से आँखकी ओर आती है, सर्वदा ४१ दर्जे का कोण होता है; इस के सिवाय किसी और कोण से इन्द्र-धनुष बन नहीं सकता । इन्द्र-धनुष की सब से अधिक ऊंचाई ४२½ दर्जा है, इस से ऊंचा धनुष बन नहीं सकता । और न इन्द्र-धनुष उस स्थिति में बन सकता है, जब सूर्य ४० दर्जे से ऊंचा हो ।

१३०—जो धनुष एक मनुष्य देखता है वही दूसरा नहीं देखता, प्रत्येक मनुष्य जुदा जुदा धनुष देखता है, इतना ही नहीं वरन एक ही मनुष्य को दक्षिण आँख से और धनुष दिखाई देताहै, और वाम से और । कारण इस का स्पष्ट है; एक सूच्याकार शंकु के दो शीर्ष नहीं हो सकते । इस लिए हर एक धनुष के सूच्याकार शंकु का भी एक ही शीर्ष होगा; इस लिए जिस धनुष को जो आँख देखती है वही आंख उस के सूच्याकार शंकु का शीर्ष होगी ।

प्रकाशमण्डल ।

१३१—कभी कभी चाँद या सूर्य के आस पास प्रकाश-मंडल हुआ करता है, जिसको देख कर लोग बहुधा वर्षा

प्रकार पानी में कोई वस्तु गिरती है, तो उस के गिरने से वृत्त पैदा होते हैं, फिर ज्यों ज्यों ये वृत्त फैलते जाते हैं, उन की गति मंद होती जाती है; यहां तक कि दूर जाकर अदृश्य हो जाते हैं। इसी प्रकार वायु में भी, उन वस्तुओं के उपस्थित होनेसे, जिन में आवाज़ पैदा हुई है, वृत्त उत्पन्न होते हैं, और फैलते फैलते दूर जाकर नष्ट हो जाते हैं।

१३६—एक ऐसे यंत्र के द्वारा जो कि बिलकुल सही है, यह बात सिद्ध हुई है, कि कंप जितना तीव्र होगा, आवाज़ उतनी ही बड़ी होगी। देखो मच्छर कितना छोटा सा कीट है, परन्तु उसके पंख एक सेकण्ड में १५००० बार हिलते हैं, इस कारण इनके हिलने की आवाज़ सुनाई देती है। वायु की लहर कान तक पहुँचती है, तो कान के पड़दे में जाकर लगती है, इससे उन श्रावण नाड़ियों पर प्रभाव पड़ता है, जो कि सुनने का काम देती हैं, और वे इस प्रभाव की ख़बर को मस्तिष्क तक पहुंचाती हैं, और वहाँ आवाज़ का ज्ञान होता है। परन्तु क्यों और कैसे ज्ञान होता है, न बुद्धि इस का पता लगा सकता है और न सायन्स इस में कुछ सहायता दे सकता है।

१३७—आवाज़ किसी प्रकार उत्पन्न क्यों न हुई हो, चोट से हो या रगड़ से, पैदा होते ही दूर तक पहुँच नहीं जाती। इस को एक जगह से दूसरी जगह तक पहुँचने में कुछ

काल लगता है। यदि तोप दो तीन मील की दूरी पर छोड़ी जाय, तो प्रथम चमक दिखाई देती है, और फिर कुछ क्षण के पश्चात् आवाज़ सुनाई देती है। यह तो एक साधारण बात है, कि बिजली की चमक पहिले दृष्टिगोचर होती है, और कड़क दो या तीन पलों के पश्चात् सुनाई देती है। प्रयोग और जाँच से यह बात सिद्ध हुई है, कि आवाज एक सेकण्ड में ११२० फ़ीट चलती है। यदि बिजली की चमक से ५ सेकण्ड के पश्चात् कड़क सुनाई दे, तो समझना चाहिए कि बादल एक मील की दूरी पर है। आवाज नीचे से ऊपर की ओर सुगमता से जाती है, परन्तु ऊपर से नीचे की तरफ़ कम आती है। कारण यह है, कि गाढ़े वायु से विरल वायु की ओर आवाज बहुत सुगमता से चली जाती है, परन्तु विरल से गाढ़े की ओर आने में स्थिति विपरीत है। गुब्बारे में बैठ कर उड़नेवाले पृथ्वी के लोगों का शोर, कुत्ते का भोंकना और इसी प्रकार की आवाजें छः हज़ार फ़ीट की ऊँचाई तक सुन सकते हैं; परन्तु पृथ्वी के लोगों को गुब्बारेवालों की आवाज तीन सौ फ़ीट से भी कठिनता से सुनाई देती है। शुष्क वायु की अपेक्षा नमनाक वायु में आवाज़ दूर तक जाती है। जब गुब्बारेवालों के और पृथ्वी के बीच में बादल होता है, तो गुब्बारे के लोग नीचे की आवाजें अच्छी तरह सुन सकते हैं।

१३८—आवाज के गुरु लघु होने के बहुत से कारण हैं—

(१) आवाज़ देनेवाली वस्तु से दूर या नज़दीक होना।

(२) चोट या रगड़ से वायु में ऊची या नीची लहरों का पैदा होना ।

(३) आवाज देने वाली वस्तुओं की सख्या का न्यून या अधिक होना ।

(४) वायु का स्थिर रहना या चलना ।

(५) वायु का गाढा या विरल होना ।

यदि सुननेवाला आवाज के निकट होगा, तो आवाज ठीक सुनाई देगी, और यदि दूर होगा, तो अवश्य न्यून सुनाई देगी। चोट या रगड से वायु में लहरें जितनी ऊची होंगी, उतनी ही आवाज गुरु होगी, और लहरें जितनी नीची होंगी, उतनी ही आवाज लघु होगी। यदि बहुत सी धीमी आवाजें एक साथ होंगी, तो सुननेवाले को शोर सुनाई देगा। निबिड वायु में विरल वायु की अपेक्षा आवाज अच्छी सुनाई देती है। १५००० फ़ीट की ऊचाई पर बंदूक की आवाज़ साधारण पिस्टल से अधिक नहीं होती, क्योंकि ऊपर वायु बहुत ही विरल होता है।

१३९—मामूली तौर पर और सब से अधिक तर आवाज के एक जगह से दूसरी जगह जाने का कारण वायु है, परन्तु प्रवाहिक और ठोस वस्तुओं के द्वारा भी आवाज़ जा सकती है, इतना ही नहीं बल्कि वायु की अपेक्षा दूर और स्पष्टतर। गोता लगाने वाले तट के लोगों की बात चीत समुद्र के पेंदे से अच्छी

तरह सुन सकते हैं । रात्रि के समय पृथ्वी पर कान लगाने से, दूर के आने जाने वालों की आहट अच्छी तरह सुनने में आती है, परन्तु यदि सिर अलग करलें तो बिलकुल आवाज़ सुनाई नहीं देती । वायु की अपेक्षा ठोस वस्तुओं में आवाज की गति तीव्रतर होती है, इस कारण यदि कोई पहाड़ पर सुरंग उड़ाई जाती है, ग्रैार कोई मनुष्य एक मील की दूरी पर सुरंग उड़ाने के समय किसी चटान से सिर लगाये हो, तो उस को दो आवाजें सुनाई देंगी, एक तो चटान के द्वारा, ग्रैार दूसरी, उसके दो तीन सेकण्ड के पश्चात्, वायु के द्वारा । यदि बहुत सी आवाज़ें एक साथ हों, ग्रैार उनके ज़ोर में अधिक अन्तर न हो, तो सब की चाल बराबर होगी, अर्थात् सब आवाज़ें किसी स्थान पर एक साथ पहुँचेंगी । ढोल, नय इत्यादि बाजों की आवाज़ें एक साथ पहुँचती हैं, आगे पीछे नहीं पहुंचती । परन्तु जब आवाज़ों के ज़ोर में भेद अधिक होता है, तो गुरु आवाज़ पहिले पहुँचती है और लघु पश्चात् । कमाण्डिङ्ग तोप चलाने का हुक्म दे, और कोई व्यक्ति इतनी दूरी पर हो, कि कमाण्डिङ्ग का हुक्म सुन सके, तो उस को तोप की आवाज़ पहिले सुनाई देगी, और कमाण्डिङ्ग की दो एक पल पश्चात् । स्मरण रहे. कि आवाज़ बिना किसी साधन के सुनने में नहीं आ सकती ; अर्थात् जिस वस्तु से आवाज़ उत्पन्न हुई हो, वहाँ से लेकर कान तक कोई न कोई साधन आवाज़ के पहुँचने का होगा, तो

आवाज़ सुनाई देगी, नहीं तो नहीं। इसलिए शून्य में से आवाज़ कान तक नहीं पहुँच सकती। यदि आप से आप बजने वाला बाजा किसी बर्तन में रख कर, उस बर्तन का वायु नल द्वारा निकाल लें, तो बाजे की आवाज़ सुनाई नहीं देगी, परन्तु यदि बाजे से कान तक किसी धातु का तार होगा, तो उस तार के द्वारा बाजे की आवाज़ कान तक पहुँच जायगी, चाहे बर्तन वायु से ख़ाली क्यों न हो। संक्षेपतः आवाज़ को पहुँचाने के लिए साधन का होना अवश्य है, चाहे वह साधन वायु हो, चाहे कोई ठोस वा द्रव पदार्थ।

१४०—वायु के सिवाय आवाज़ को पहुंचाने के जितने साधन हैं, उन में कठिनता यही है, कि इरादा और तदबीर की आवश्यकता है। वायु ही ऐसा साधन है, कि जिस में न तो इरादा करने की ज़रूरत, और न तदबीर की आवश्यकता है, आवाज़ स्वयं ही ध्यान को आकर्षण कर लेती है। आवाज़ कहीं भी उत्पन्न हो, और कैसी ही क्यों न हो, अच्छी हो वा बुरी, मनोहर हो वा कर्णकटु, रोना हो वा गाना, वायु उसको सुनने वाले के कानों तक पहुंचा देगा, चाहे उस तरफ़ उस का ध्यान हो वा न हो। आवश्यकता इतनी ही है, कि दूरी इतनी अधिक न हो, कि आवाज़ ही वहां तक पहुँचते पहुँचते नष्ट हो जाय। हमारा जीवन कितना नीरस होता, यदि वायु में आवाज़ पहुँचाने की शक्ति न होती। हमारे बहुत से काम अधूरे रहते, आपस में एक दूसरे से बात चीत

स्थिति में उत्पन्न होती है, जब कि आवाज़ के स्थान और रोक के बीच में काफ़ी दूरी हो। जब बोलने वाले और रोक के बीच ११२ फ़ीट का फ़ासला होता है, तो प्रतिध्वनि केवल अन्तिम बात की सुनाई देती है। दो चार शब्द उसी समय सुनाई देते हैं, जब कि दूरी इससे दुगुनी वा तिगुनी हो। कोई कोई सूरतों में एक ही आवाज़ से कई प्रतिध्वनियाँ एक के पीछे एक उत्पन्न होती हैं। यदि दो ऊँचे पहाड़ एक दूसरे के समानान्तर चले गये हों, और उनके बीच में बंदूक़ छोड़ी जाय, तो उस एक आवाज़ की बहुत प्रतिध्वनियाँ एक के पीछे एक सुनाई देंगी। जब आवाज़ और उस (आवाज़) की रोक में दूरी ११२ फ़ीट से न्यून होती है, तो प्रतिध्वनि तो पैदा होती है, परन्तु आवाज़ और प्रतिध्वनि एक होकर गड़बड़ हो जाती है, केवल ज़ोर की आवाज़ सुनाई देती है। ऐसी स्थिति में कोई कोई वार आवाज़ और प्रतिध्वनि के मेल से बुरा प्रभाव उत्पन्न होता है, अर्थात् आवाज़ ज़ोर की तो आती है परन्तु समझी नहीं जाती। यह स्थिति उन गृहों में पैदा होती है, जहां वस्तुएं कुछ नहीं होतीं, और मनुष्यों का समूह गृह के विस्तार को देखते कम होता है। यदि कोई व्याख्यान-दाता किसी ऐसे मकान में व्याख्यान दे, जो बहुत ऊँचा और विस्तृत हो, और उसमें सुनने वालों की संख्या मकान की मुनासिबत से हो तो व्याख्यानदाता का कहना भली भांति

समझ में आवेगा; परन्तु यदि लोग मकान की गुंजाइश से कम हैं, तो व्याख्यान जैसा चाहिए वैसा समझ में नहीं आयेगा। गुंबददार मन्दिरों और मसजिदों की भी यही स्थिति है, यदि दो चार आदमी स्थित हों, और एक आदमी बात चीत थोड़े फ़ासले पर करता हो, तो उसकी आवाज़ समझ में नहीं आयेगी।

शुद्धिपत्र

—:o:—
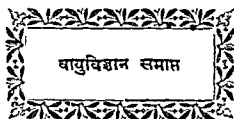
पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	२	गारवशाली	गौरवशाली
७	१९	मोल	मील
१४	२	नला	नली
२२	१	नला	नली
२६	१	किसा	किसी
२७	७	चाज	चीज
४१	२	जाता है	जाती है
,,	९	सर्दा	सर्दी
४४	१०	सर्दा	सर्दी
४५	१	दर्ज	दर्जे
४६	१	दर्ज	दर्जे
,,	१२	सर्दा	सर्दी
४८	२	आर	और
,,	९	गर्मा	गर्मी
४९	१५	गर्मा	गर्मी
५०	१६-१७	सूर्य को	सूर्य को
५३	५	फ़ाट	फ़ीट

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३३	६	विमानियों	विशानियों
१३४	८	छाटे	छोटे
१३८	१९	का	की
१४०	९	भो	भी
१४२	६	(Phenomenon)	(Phenomena)
१४३	१७	सफना	सफती
„	१८	„	„
१४५	१८	होगि	होगी
१५१	२	धार	धीर

——:०:——